योगविद्या

वर्ष 12 अंक 11
नवम्बर 2023

बिहार योग विद्यालय, मुंगेर, बिहार, भारत

हरि: ॐ

योगविद्या का सम्पादन, मुद्रण और प्रकाशन स्वामी सत्यानन्द सरस्वती के संन्यासी शिष्यों द्वारा स्वास्थ्य लाभ, आनन्द और प्रकाश प्राप्ति के इच्छुक व्यक्तियों के लिए किया जाता है। इसमें बिहार योग विद्यालय, बिहार योग भारती, योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट तथा योग शोध संस्थान के क्रियाकलापों की जानकारियाँ प्रकाशित की जाती हैं।

सम्पादक – स्वामी ज्ञानसिद्धि सरस्वती

योग विद्या मासिक पत्रिका है।

बिहार योग विद्यालय, गंगादर्शन, फोर्ट, मुंगेर, 811201, बिहार, द्वारा प्रकाशित।

थॉमसन प्रेस इण्डिया लिमिटेड, फरीदाबाद, 121007, हरियाणा में मुद्रित।

© Bihar School of Yoga 2023

उपयोगी संसाधन

वेबसाइट :

www.biharyoga.net
www.sannyasapeeth.net
www.satyamyogaprasad.net

एप्प : (Android एवं iOS उपकरणों के लिए)
Bihar Yoga
APMB
YOGA (अंग्रेजी पत्रिका)
YOGAVIDYA (हिन्दी पत्रिका)
FFH (For Frontline Heroes)

कुल पृष्ठ संख्या : 56 *(कवर पृष्ठों सहित)*

कवर एवं अन्दर के प्लेट:
श्री स्वामी सत्यानन्द सरस्वती

सत्यम् के प्रति उनके गुरु, स्वामी शिवानन्द जी के उद्गार

कुछ शिष्य गुरुभक्त होते ही नहीं, और कुछ होते हैं अन्ध भक्त। गुरु के अवसान के बाद उनकी नाव डूब जाती है। लेकिन सत्यम् तो वह ज्योति है जो विश्व में शिवम् का नाम आलोकित करता रहेगा। सत्यम् यथार्थ में सत्यम् है।

– स्वामी शिवानन्द सरस्वती

बिहार योग विद्यालय, गंगादर्शन, फोर्ट, मुंगेर–811201, बिहार के लिए स्वामी शिवध्यानम् सरस्वती द्वारा प्रकाशित एवं मुद्रित
मुद्रक – थॉमसन प्रेस इण्डिया लिमिटेड, 18/35 माइलस्टोन, दिल्ली मथुरा रोड, फरीदाबाद–121007, हरियाणा
स्वामित्व – बिहार योग विद्यालय **सम्पादक** – स्वामी ज्ञानसिद्धि सरस्वती

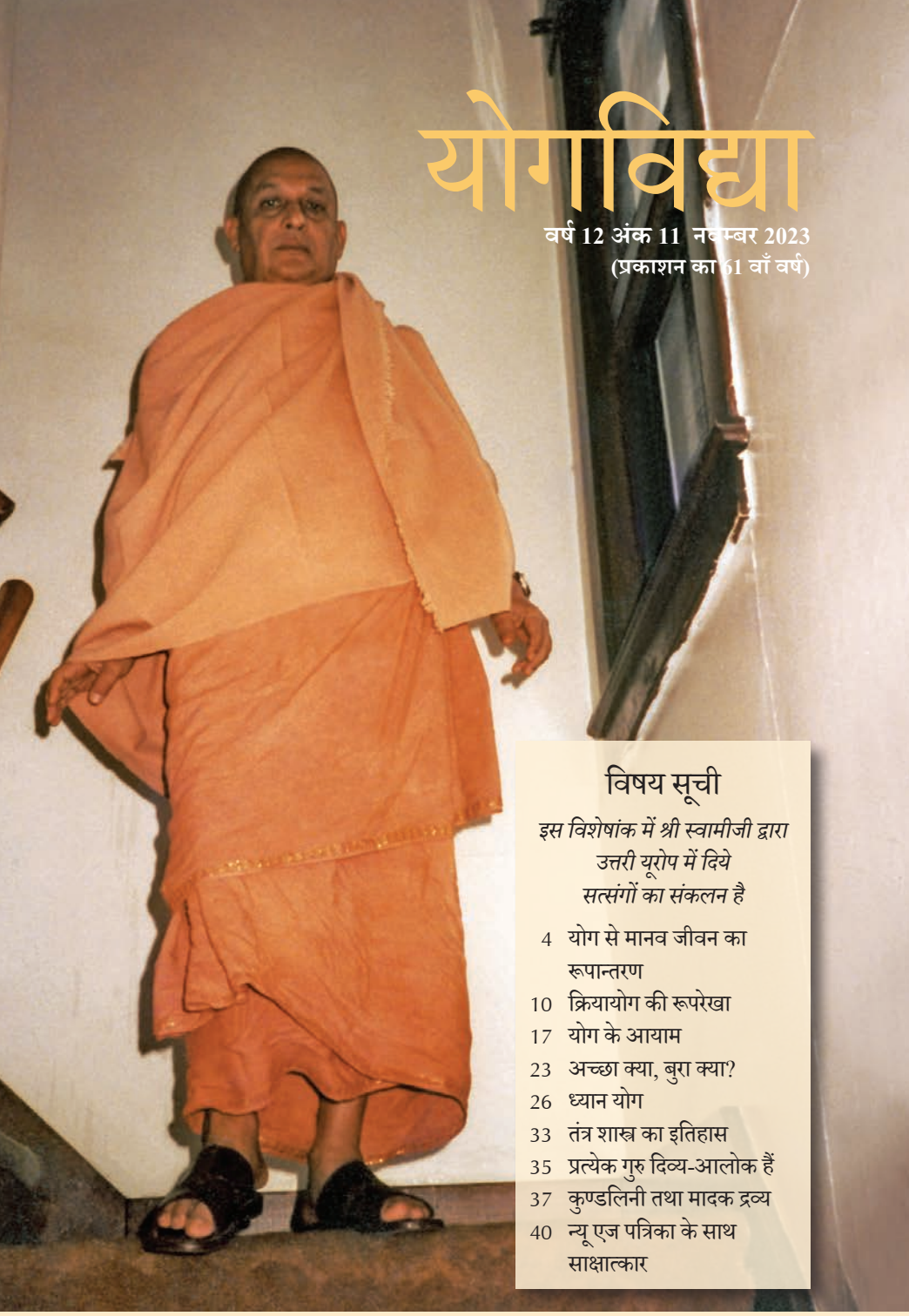

योगविद्या

वर्ष 12 अंक 11 नवम्बर 2023
(प्रकाशन का 61 वाँ वर्ष)

विषय सूची

इस विशेषांक में श्री स्वामीजी द्वारा उत्तरी यूरोप में दिये सत्संगों का संकलन है

4 योग से मानव जीवन का रूपान्तरण
10 क्रियायोग की रूपरेखा
17 योग के आयाम
23 अच्छा क्या, बुरा क्या?
26 ध्यान योग
33 तंत्र शास्त्र का इतिहास
35 प्रत्येक गुरु दिव्य-आलोक हैं
37 कुण्डलिनी तथा मादक द्रव्य
40 न्यू एज पत्रिका के साथ साक्षात्कार

तपस्विभ्योऽधिको योगी ज्ञानिभ्योऽपि मतोऽधिक:। कर्मिभ्यश्चाधिको योगी तस्माद्योगी भवार्जुन॥

योग से मानव जीवन का रूपान्तरण

यद्यपि धर्म के प्रति मेरे मन में अनादर-भाव नहीं है, परन्तु योग को मैंने कभी धर्म नहीं माना। मुझे सदैव यह महसूस होता रहा है कि व्यक्तित्व का संगठन आन्तरिक रूप से होता है, बाह्य रूप से नहीं। जब तक धर्म के साथ योग को न सम्मिलित किया जावे तब तक ऐसा नहीं हो सकता। इस रूप में योग शताब्दियों से उपस्थित है।

लोग सोचते थे कि योग त्याग का मार्ग है और योगी का अर्थ संन्यासी ही माना जाता था। कीलों के बिस्तर पर सोना, कुछ आध्यात्मिक शक्ति का प्रदर्शन करना, तेजाब पी जाना, आग या पानी पर चलना ही योग माना जाता था। योग शब्द के वास्तविक अर्थ से लोग अनभिज्ञ थे। उसे वे केवल एकांतवास की वस्तु मानते थे।

अनेकानेक कठिनाइयों का सामना करते हुए स्वमी विवेकानन्द और स्वामी शिवानन्द जैसे कुछ महान् संत-महात्माओं ने इस विज्ञान से जनसाधारण का परिचय कराया। वर्तमान में जन समुदाय यह अनुभव करने लगा है कि योग एक जीवन-कला है और इसकी मुख्य भूमिका व्यक्ति को अनुशासित करने में है। आपके जीवन मूल्यों पर इसका कोई प्रभाव नहीं पड़ता। किसी भी विचारधारा से अनुप्राणित व्यक्ति अपने जीवन में योग का समावेश कर सकता है। अमेरिका के राज्यों में मैं करीब एक माह था। वहाँ के गिरजाघरों में, धार्मिक स्थानों में, होटल-कचहरी में, प्रत्येक स्थान में हजारों की संख्या में लोग मानसिक रोगों से ग्रस्त हैं। भौतिक सुखों के साथ जीवन यापन द्वारा मानसिक रोगोपचार नहीं हो सकता और न ही कुछ प्रातःकालीन प्रार्थनाएँ ही इसके निवारणार्थ पर्याप्त हैं।

मानसिक रोग बहुत विषम शब्द है। इसे समझना अनिवार्य है। कुछ संवेदनशील व्यक्ति इस शब्द के प्रति सचेत हैं, परन्तु बहुसंख्यक इससे अनभिज्ञ हैं। वे चिन्ता, परेशानी और भय से भरा जीवन यापन कर रहे हैं, जिसका प्रत्यक्ष ज्ञान उन्हें नहीं है। लोगों का कहना है कि योग उनके लिए नहीं है, परन्तु संसार में कोई भी व्यक्ति बीमारी से अछूता नहीं है, किसी का भी मस्तिष्क रोगमुक्त नहीं है। आप हमेशा अपने शरीर का विचार करते हैं। आपने सिर दर्द, सर्दी-जुकाम, ज्वर आदि सम्बन्धी चिकित्सा विज्ञान का

अध्ययन किया है। हम आन्तरिक व्यक्तित्व के रोगों पर भी विचार करें, उन मनौवैज्ञानिक इच्छाओं पर चिन्तन करें जिनसे हम अपरिचित हैं, परन्तु जिनका प्रभाव हमारे दैनिक व्यवहार पर पड़ता है। शारीरिक महामारी की भाँति यह बीमारी सम्पूर्ण विश्व में व्याप्त हो रही है, इसका इलाज तुरन्त होना चाहिए, नहीं तो कुछ भी घटित हो सकता है।

व्यक्ति विशेष का मानस व्यक्तियों के मस्तिष्क समूह का ही एक अंग है। व्यक्तिगत मानसिक रोग या जनसमूह की मानसिक बीमारी का परिणाम निराशा हो सकती है। जब शरीर अस्वस्थ होता है तो हम उसके प्रति सावधान रहते हैं और उसकी देखभाल करते हैं, लेकिन जब मन रोगग्रस्त होता है तो हम उससे अनभिज्ञ रहते हैं, और न उसकी उचित देखभाल ही करते हैं। हमारा आध्यात्मिक मन, हमारे मानस का आन्तरिक स्तर हमारी ग्रहण शक्ति के बाहर है। हम केवल भौतिक जगत् में निवास करते हैं।

योग एक ऐसी विधि है जिसके द्वारा हम अपनी संस्थाओं के लिए स्वस्थ वातावरण निर्मित करते हैं। बहुत-से ऐसे व्यक्ति हैं जो मानसिक बीमारी पर विचार नहीं करते। उनके क्रिया-कलापों, विचारों, व्यवहारों पर ध्यान दीजिए। देखिए कि वे किस प्रकार अपने विचारों एवं जीवन दर्शनों के द्वारा समाज पर कुप्रभाव डालते हैं।

जीवन के व्यवहारों के प्रति अवचेतन मन एवं उसका गहनतम स्तर उत्तरदायी रहता है। इसलिए यह आवश्यक हो जाता है कि आन्तरिक व्यक्तित्व

का इलाज योगाभ्यास द्वारा हो सके। इस विधि में भावनात्मक अव्यवस्था के कारण उत्पन्न विक्षेपों का निराकरण भी सम्मिलित है। भक्ति योग उन व्यक्तियों के लिए है जिनमें भावनात्मक विकार हैं, क्योंकि इसके द्वारा भावनाओं का शुद्धिकरण होता है। व्यक्तित्व की मनोवैज्ञानिक त्रुटियाँ और आध्यात्मिक विकारों को ध्यान या एकाग्रता के अभ्यास द्वारा दूर किया जा सकता है। यह सच है कि ध्यान मन को प्रकाशित करता है और अंत में आत्म-दर्शन कराता है, परन्तु जब तक चहुँ ओर से मन शांत नहीं होगा तब तक ईश्वर-साक्षात्कार कभी नहीं हो सकता। आप अपनी मानसिक व्यवस्था ठीक करना चाहें या ईश्वर साक्षात्कार की कामना करें, योग सबके लिए उपयोगी विधि है।

कर्मयोग, हठयोग, ज्ञानयोग और राजयोग योग की विभिन्न शाखायें हैं। आधुनिक मानव, जो चेतना के नवीन क्षेत्र में कदम रखना चाहता है, जो सम्पूर्ण मानव समाज में स्वस्थ वातावरण का निर्माण करने का इच्छुक है, उसे ध्यान योग का अभ्यास करना चाहिए। ध्यान योग द्वारा शारीरिक, मानसिक एवं भावनात्मक तनाव दूर होते हैं। प्रायः सभी तनावों को दूर कर व्यक्तित्व को समग्र रूप से पुनर्गठित किया जाता है। उपर्युक्त तीनों प्रकार के तनाव व्यक्तित्व में समाविष्ट रहते हैं। एकाग्रता या ध्यान के अभ्यास द्वारा उन्हें सुगमता से सुलझाया जा सकता है।

इसलिए ध्यान के अभ्यास में दो सोपान हैं। प्रथम सोपान है चेतना को हटाना या इन्द्रियों को अन्तर्मुख करना। इन्द्रिय-निग्रह की क्रिया के पश्चात् चेतना का विकास आन्तरिक रूप से होता है। जागरूकता या चेतनता क्रमशः बढ़ती चली जाती है। अचेतन मन प्रकाशित हो जाता है।

इसी विषय पर मैं अपने विश्व भ्रमण में चर्चा कर रहा हूँ। मैं कक्षाओं का संचालन कर रहा हूँ। साथ ही व्यक्तियों का भी इलाज कर रहा हूँ जो अनिद्रा, परेशानी, विक्षेप आदि मानसिक रोगों से ग्रस्त हैं। मस्तिष्क के क्रियाकलापों के विषय में विस्तृत चर्चा के बिना ही मैं यह कह सकता हूँ कि सम्पूर्ण व्यक्तित्व का पुनर्निर्माण करने के लिए ध्यान सरलतम विधि है। इसके द्वारा समस्त जीवन को परिवर्तित किया जा सकता है।

कुछ समय पूर्व मैं एक अपराधी के साथ रहता था। वह एक खतरनाक असाधारण मनुष्य था। एक शाम मैंने उसे आँख बन्द करके सामान्य श्वास लेते हुए बैठने के लिए कहा। इस प्रकार मैंने उसे कुछ बताये बिना ध्यान का अभ्यास शुरू करवाया। पन्द्रह दिन बाद ही मुझे उसमें बड़ा परिवर्तन दिखाई

दिया। अंत में उसने स्वीकार किया कि प्रत्येक रात्रि को वह हत्या आदि की योजना बनाता था, जिसे वह कार्य रूप में परिणत नहीं कर सकता था। इस उदाहरण से स्पष्ट है कि किस प्रकार योग द्वारा व्यक्ति को शान्ति प्राप्त होती है। शारीरिक एवं मानसिक, दोनों क्षेत्रों में मनुष्य को शान्ति मिलती है।

मानव मस्तिष्क पूरे समय तनावों की स्थिति में रहता है। रात्रि में भी निद्रा के समय मानस पटल पर तनाव रहता है। यदि मस्तिष्क में आने वाली तरंगों का अवलोकन किया जाये तो ज्ञात होगा कि वे कितनी नकारात्मक रहती हैं। इसी तनाव की स्थिति में मन कुविचारों का आधार बन जाता है। व्यक्तित्व में अव्यवस्था आ जाती है।

ध्यान के अभ्यास के समय व्यक्ति विशेष की चेतना अनेक शान्ति-क्षेत्रों से आती-जाती है। इन शान्तिपूर्ण क्षेत्रों में असामान्य ग्रंथियों का ह्रास होता है। अंत में एक स्थिति ऐसी आती है जब मन को शक्ति, ज्ञान और शान्ति प्राप्त होती है।

कई वर्षों तक योग का संयोग अध्यात्म विद्या के साथ किया जाता था, परन्तु वर्तमान में वह आपके व्यक्तित्व का अंग माना जायेगा। आप शिक्षित एवं बुद्धिवादी हैं, अतः आप दुःख या निराशा के प्रति सजग नहीं हैं, परन्तु वह आपके अर्द्धचेतन मन की गहराई में समाया हुआ है। यदि आपको नजरबन्द करके कोई मनोवैज्ञानिक आपकी समस्याओं एवं कठिनाइयों के विषय में पूछे तो आपका चेतन व्यक्तित्व बाह्य रूप से उसे स्वीकार नहीं करना चाहेगा। आप अपने दोषों को छिपाना चाहेंगे।

समय आ गया है जबकि हमें अपने आपको मुक्त करना है। सर्वप्रथम हम अपने व्यक्तित्व सम्बन्धी समस्याओं का निराकरण करेंगे, जिसके बाद मन अंतरतम को अभिव्यक्त करने में समर्थ हो जायेगा। एक लम्बी अवधि के बाद अंततः आत्मज्ञान की प्राप्ति होगी जो हमारे जीवन का अंतिम उद्देश्य है, जिसके लिए प्रत्येक मानव ने जन्म लिया है। आप चाहे पूर्वी देश के निवासी हों या पाश्चात्य देशों के, सभी मनुष्यों की अन्तर्चेतना उसी असीम सत्ता का अंशमात्र है। सर्वोत्तम शक्ति और उच्चतम ज्ञान हमारे में ही अंतर्निहित है।

ध्यान के समय आप अपने मन पर पड़े हुए प्रभावों के समूह को देख सकते हैं। गहन ध्यानावस्था में आप अपने व्यक्तित्व के विभिन्न चिह्नों के दर्शन करेंगे। सांकेतिक रूप में व्यक्ति की प्रवृत्तियाँ ही प्रकट होती हैं। शेर, बैल, सर्प, दिव्य रूप, पुष्प, शव, तारा, द्वीप, घर, नदी, पुल, स्वर्ग आदि सैकड़ों-हजारों

वस्तुओं को आप देख सकते हैं। वे सब आपकी चेतना के ही रूप हैं। आप इसे समझें या न समझें, ये सब सांकेतिक प्रकटीकरण हैं। योग में यह वरदान तुल्य है। उन्हें प्रकट होकर नष्ट हो जाने दीजिए।

ध्यानाभ्यास के समय शान्तिपूर्वक बैठकर आप एक बिन्दु पर एकाग्रता रखने का प्रयास करते हैं। प्रारम्भ में जल्द ही वह बिन्दु हट जाता है, परन्तु धीरे-धीरे इस अभ्यास को बढ़ाना चाहिए। इस अभ्यास से अवचेतन मन की प्रवृत्तियों, अनुभवों, प्रभावों, व्यवहारों, छिपी वस्तुओं आदि को प्रकाश में आने दिया जाता है। वे सब स्वरूपों या प्रतीकों के रूप में प्रत्यक्ष होती हैं। आवश्यक नहीं कि आप उन्हें समझने का प्रयत्न करें या उनका विश्लेषण करें।

एक समय ऐसा आता है जब उन सब स्वरूपों का अंत होने लगता है, मानो सिनेमा की रील बहुत धीरे-धीरे घूमती है। इसका अर्थ है कि आपके व्यक्तित्व के विभिन्न क्षेत्र अनावृत्त हो रहे हैं। वह प्रकाश के अंतिम बिन्दु पर पहुँच रहा है। इस अवस्था में मन इच्छारहित, पापरहित एवं रोगरहित हो जाता है।

जिस प्रकार आप अपनी शारीरिक हलचलों से परिचित रहते हैं, ठीक उसी प्रकार आप अपनी मानसिक गतिविधियों से परिचित हो जायेंगे। आधुनिक विज्ञान ने इस पृथ्वी के अनेक भयंकर रोगों का रहस्योद्घाटन किया है और सम्भवतः कुछ वर्षों के पश्चात् शेष रोगों का निवारण इस भू-भाग पर से करने में हम समर्थ हो जायेंगे। भूतकाल में जितनी तीव्र गति से हैजा या प्लेग की बीमारी फैलती थी, आज उसी गति से मानसिक रोग फैल रहे हैं। वास्तव में हमने स्वास्थ्य के एक पहलू पर विजय प्राप्त की है, पर उसका दूसरा पहलू अर्थात् मानसिक स्वास्थ्य अछूता रह गया है। मनोवैज्ञानिकों के लिए यह बड़ा उत्तरदायित्वपूर्ण कार्य है। वे इसके लक्षणों का इलाज कर रहे हैं, लेकिन योग लक्षण का इलाज नहीं करता, वह सम्पूर्ण संरचना को ही परिवर्तित कर देता है। उसके द्वारा समस्त संस्थानों का पुनर्गठन होता है। संरचना, आधार, नींव में ही परिवर्तन आ जाता है।

मनोविज्ञान एवं योग में यही मूलभूत भिन्नता है। मनोविज्ञान में लक्षणों का निवारण किया जाता है। इलाज सफल हुआ तो रोगी स्वस्थ होने का अनुभव करता है, परन्तु वह सुरक्षा का अनुभव नहीं करता। पूर्ण विश्वास के साथ वह यह नहीं कह सकता कि भविष्य में पुनः उसे वह तकलीफ नहीं होगी। वह जानता है कि वह किसी प्रकार के मानसिक रोग से पीड़ित था, परन्तु पुनः कभी भी कुछ भी घटित हो सकता है। इससे उसके जीवन में भावनात्मक निराशा

का आगमन हो जायेगा, उसके जीवन का ही अंत हो जायेगा। परन्तु जब आप एक बार योग में प्रवेश करते हैं, ध्यान-मार्ग अपनाते हैं, तो आप निर्भीकता पूर्वक कह सकते हैं कि आप सफलता-असफलता, आशा-निराशा, तनाव का कई दिनों तक सामना करने के बाद भी जीवित रह सकते हैं। शक्ति एवं साहस के साथ जीवन के उतार-चढ़ावों का सामना आप कर सकते हैं। जीवन की घटनायें आपको निराशा के गर्त में नहीं डाल सकतीं, क्योंकि आपने योग द्वारा सही मानसिक दृष्टिकोण को समझा है। मानसिक स्वास्थ्य के रहस्य को आप समझ गए हैं। योग की यही उपलब्धि है।

इस शताब्दी में योग सहस्रों व्यक्तियों की मदद कर रहा है। क्या मनोवैज्ञानिक उन हजारों बालक-बालिकाओं की सहायता कर सकता है, जिन्होंने एल.एस.डी. लिया है? नहीं। परन्तु महर्षि महेश योगी नामक व्यक्ति ने उत्तम ध्यान की सामान्य क्रिया के द्वारा उनकी मदद की है। हजारों व्यक्तियों से मेरा साक्षात्कार हुआ है। उन्होंने पीना छोड़ दिया है। प्रातः एवं संध्या वे ध्यान का अभ्यास करते हैं। यह एक ऐसा जीता-जागता उदाहरण है, जो सिद्ध करता है कि स्वयं से बिना संघर्ष किए धर्म, चरित्र, इच्छाशक्ति का दमन किए बिना भी आप अपने को बदल सकते हैं। योगाभ्यास द्वारा व्यक्ति के जीवन में महान् परिवर्तन आता है।

– जून 1968, हिन्दू केन्द्र, लंदन, इंग्लैण्ड

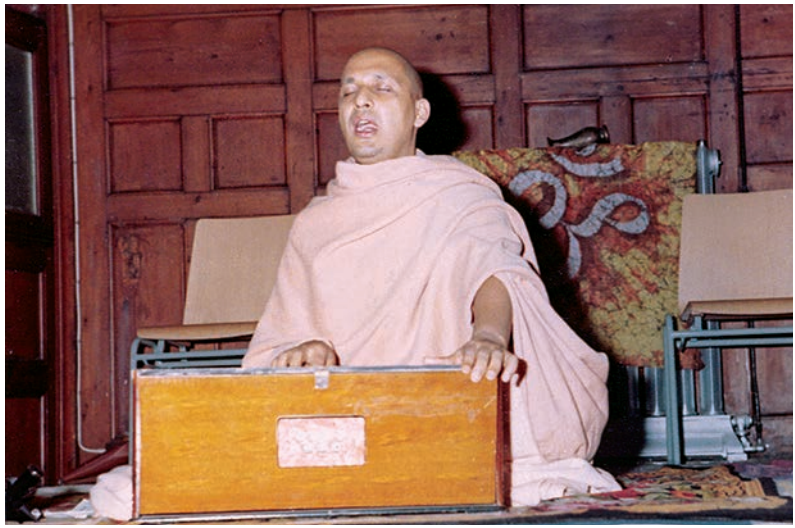

क्रियायोग की रूपरेखा

योग के एक भाग का सम्बन्ध मन की मनोवैज्ञानिक परिधि से है। यह भाग बाह्य जगत् से वृत्तियों को हटाकर मन को एकाग्र करने से सम्बन्धित है। यह योग पद्धति पूरे संसार में लोकप्रिय हुई है। सभी लोग इसके बारे में थोड़ी-बहुत जानकारी रखते हैं। इसकी विधि यह है कि वस्तु की ओर देखो, आँखें बन्द करो, मन को बाह्य अनुभवों से खींचो तथा ध्यान व समाधि में पहुँच जाओ। देखने में यह ध्यान की बड़ी सरल पद्धति है, किन्तु क्या कभी किसी ने इस पद्धति से सफलतापूर्वक ध्यान किया है?

यदि ध्यान के ऐसे साधकों की ध्यानावस्था में वैज्ञानिक जाँच कराई जाए तो उनके मस्तिष्क की सामान्य अवस्था से कोई विशेष अन्तर नहीं मिलेगा। यद्यपि उनका मन बाह्य वस्तुओं से हट जाएगा, किन्तु उन्हें ध्यान का नहीं, बल्कि निद्रा का ही अनुभव होगा।

मन को बलपूर्वक एकाग्र करने का अभ्यास कभी भी ध्यान में नहीं पहुँचा सकता, वह निद्रा तथा तनाव की स्थिति में ही ले जाएगा। यह ध्यान योग के अभ्यासी की बहुत बड़ी कठिनाई है। अतः मैं आज योग के उस विभाग की चर्चा करूँगा जिसमें एकाग्रता की आवश्यकता नहीं होती है। योग का यह विभाग क्रियायोग के नाम से जाना जाता है।

योग विद्या में क्रियायोग एक बड़ी ही सरल तथा प्रभावशाली पद्धति है। इस पद्धति में न तो एकाग्रता की और न स्थिर आसन की आवश्यकता है। ऐसा व्यक्ति जिसका मन अति चंचल हो, जो पाँच मिनट भी एक आसन में स्थिर न बैठ सकता हो, क्रियायोग कर सकता है। वास्तव में क्रियायोग में मन को एकाग्र नहीं करते, अपितु उसमें चंचलता उत्पन्न करते हैं, उसे एक से दूसरे बिन्दु पर ले जाते हैं। कोई भी बिन्दु आपकी दृष्टि से ओझल नहीं होता।

क्रिया शब्द का अर्थ होता है मन तथा चेतना की गतिविधि। योग की अन्य पद्धतियों में जैसा करते हैं, उससे ठीक उल्टा होता है क्रियायोग में। मन तथा चेतना की गतिविधियों पर कोई अंकुश नहीं रखा जाता, न उसे शांत करने के ही उपाय किये जाते हैं। उनमें एक गति लाई जाती है, जिससे मन के विभिन्न विभाग विकसित होते हैं तथा उनमें शक्ति आती है।

क्रिया के अभ्यास तन्त्र शास्त्र में पाए जाते हैं। क्रियायोग की 76 क्रियाएँ हैं, इनमें से 27 का ज्ञान प्रायः हर क्रियायोग-शिक्षक को होना चाहिए। पाँच या सात अभ्यासों से शुरू करते हैं, किन्तु जो साधक पूरा क्रियायोग करना चाहें उन्हें काफी तैयारी करनी पड़ती है। क्रियायोग की तैयारी में श्वास की चेतना, उसका सूक्ष्म प्राणिक मार्ग तथा कुछ प्रारंभिक क्रियाओं की अच्छी जानकारी तथा अभ्यास आवश्यक है। इसके साथ क्रियायोग सीखने के लिये साधक को कुछ बन्धों तथा मुद्राओं की जानकारी भी जरूरी है।

सर्वप्रथम संक्षेप में मैं आपको श्वास की चेतना के बारे में बताऊँगा। आँखें बन्द अथवा खुली रखते हुए खड़े होकर अथवा किसी भी आसन में बैठकर, चाहे मन चंचल हो अथवा एकाग्र, यह भावना करें कि 'मैं श्वास ले रहा हूँ, मैं श्वास छोड़ रहा हूँ।' अपनी श्वास के प्रति सजग होइये। श्वास की इस निरंतर चेतना को करीब तीन मिनट तक रखिये। इसके बाद इस चेतना को भंग कीजिए। इस अभ्यास के लिये अलग से समय निकाल कर बैठने की आवश्यकता नहीं। अभी मेरे व्याख्यान को सुनते हुए भी आप अपनी श्वास का ख्याल कर सकते हैं।

इस प्रकार जब आप श्वास के प्रति सचेत होते हैं तो अपने मन के प्रति भी सचेत होते हैं, क्योंकि श्वास की सजगता से चेतना तथा सजगता, दोनों का एक साथ ख्याल होता है। आपका मन एकाग्र हो या न हो, किन्तु जैसे ही आप श्वास का ख्याल करते हैं, मन तथा चेतना के प्रति सचेत हो उठते हैं।

इसके बाद आप को जो तैयारी करनी है वह है श्वास के अतीन्द्रिय मार्ग की खोज, जिसमें श्वास के साथ चेतना का आरोहण-अवरोहण होता है। श्वास के अनेक मार्गों में से मुख्य है मेरुदण्ड, जिसमें श्वास मूलाधार चक्र से उठकर मेरुदण्ड में से होती हुई आज्ञा चक्र तक चढ़ती है। इस मार्ग में श्वास की चेतना का अभ्यास आँख खोलकर भी कर सकते हैं। सबसे महत्त्वपूर्ण बात यह है कि आप श्वास की हलचल के प्रति चेतना का विकास कीजिये और आरोहण-अवरोहण को बड़ी सतर्कता से देखते जाइये। इसी हलचल को योग में 'क्रिया' कहा जाता है।

क्रियायोग के अभ्यास से अनुकंपी तथा परानुकंपी तंत्रिका-तंत्र पुनः शक्ति अर्जित करते हैं और स्नायविक नियंत्रण मजबूत होता है। यह अभ्यास खासकर उन लोगों के लिये बड़ा लाभदायक है जो मानसिक उत्तेजना, स्नायविक असंतुलन, तनाव, परेशानी तथा तंत्रिका में कंपन आदि व्याधियों

से पीड़ित हैं। परानुकंपी तंत्रिका-तंत्र मस्तिष्क को शरीर के साथ दो केन्द्रों के माध्यम से जोड़ता है। इनमें से एक केन्द्र मूलाधार चक्र है। यहाँ से परानुकंपी तंत्रिकाओं द्वारा मस्तिष्क में उत्तेजनाएँ भेजी जाती हैं। मेरुदण्ड के ऊपरी छोर पर शीर्षग्रंथि है, जिसे योग में आज्ञा चक्र या तीसरे नेत्र के नाम से जाना जाता है। इस प्रकार मूलाधार तथा आज्ञा चक्र मस्तिष्क में संदेश संचार का कार्य करते हैं। यह संचार परानुकंपी तंत्रिकाओं के माध्यम से होता है। ये तंत्रिकाएँ हमारी समस्त अन्तःस्रावी ग्रंथियों को नियंत्रित करती हैं।

मेरुदण्ड में इन दो महत्वपूर्ण केन्द्रों के अतिरिक्त और भी केन्द्र स्थित हैं। इनमें से स्वाधिष्ठान चक्र पुच्छास्थि में, मणिपुर चक्र नाभि के पीछे, अनाहत चक्र हृदय क्षेत्र में तथा विशुद्धि चक्र ग्रीवा प्रदेश में स्थित है। शरीर में ये चार बड़े ही शक्तिशाली चक्र हैं। ये चारों चक्र मस्तिष्क को शरीर के अन्य भागों से अनुकंपी तंत्रिकाओं द्वारा जोड़ते हैं।

समस्त अन्तःप्रवाही शारीरिक अनुभव तथा संवेग इन चक्रों द्वारा अनुकंपी तंत्रिकाओं के माध्यम से तथा मूलाधार और आज्ञाचक्र द्वारा परानुकंपी तंत्रिकाओं के माध्यम से मस्तिष्क तक पहुँचाए जाते हैं। इन चक्रों द्वारा शक्ति का संचार होता है, जिसे हम मेरुदण्ड में श्वास की चेतना द्वारा उद्दीप्त करते हैं। क्रियायोग की तैयारी के इस अभ्यास को अजपा-जप के नाम से जाना जाता है।

क्रियायोग की अगली तैयारी में मुद्राओं तथा बन्धों का अभ्यास आता है। आपको इनका कुशल अभ्यासी होना चाहिए। मुख्य बन्धों में जालंधर

बन्ध एक है, जिसमें ठुड्डी को कंठकूप से सटाकर कुंभक लगाया जाता है। उड्डियान बन्ध से पेट की माँसपेशियों को बहिरंग कुंभक में अन्दर तथा ऊपर की ओर खींचते तथा सिकोड़ते हैं। तीसरा मूलबन्ध है। इसमें गुदा तथा अण्डकोष के बीच के प्रदेश को अथवा महिलाओं में गर्भाशय-ग्रीवा को ऊपर की ओर खींचते हैं। जब आप इन अभ्यासों में दक्ष हो जायें तो क्रियायोग का अभ्यास गुरु अथवा कुशल शिक्षक के निर्देशन में शुरू कर सकते हैं, क्योंकि गुरु अथवा शिक्षक यह जानते हैं कि क्रियायोग की 76 क्रियाओं में से किस साधक के लिये कौन-सी क्रिया उपयुक्त है।

योग के शरीर तथा मन पर होने वाले प्रभावों पर चल रहे अनेक अनुसंधानों से मेरा करीबी सम्बन्ध है। इस क्षेत्र में मुझे कुछ बड़े ही प्रभावशाली परिणाम प्राप्त हुए हैं। मैंने क्रिया का अभ्यास ऐसे व्यक्तियों को कराया जिनकी मानसिक प्रवृत्ति आत्महत्या करने की थी। उन्हें पूरा क्रियायोग नहीं, बल्कि सिर्फ एक-दो क्रियाओं का अभ्यास कराया जिसके परिणामस्वरूप उनमें इतना मानसिक परिवर्तन आया कि जीवन के प्रति उनका दृष्टिकोण ही बदल गया। मैं क्रियायोग के विस्तार में न जाते हुए आपको एक बड़ी सरल विधि बताऊँगा।

किसी भी आसन में बैठ जाइये। पद्मासन तथा सिद्धासन इन अभ्यासों के लिये उत्तम हैं। दोनों हाथों को घुटनों पर रखिये। कुछ भी मत कीजिये। सिर्फ मूलाधार चक्र का ध्यान कीजिये। उसे पचास बार धीरे-धीरे सिकोड़िये, फिर छोड़िये। आप देखेंगे कि आपकी उदासी तथा भारीपन एकदम खत्म हो जाएँगे।

मूलबंध का यह अभ्यास न तो कठिन है और न क्रियायोग ही। यह इसलिये महत्त्वपूर्ण है कि यह उस पराशक्ति को जगाता है जो मूलाधार में सुप्त तथा निष्क्रिय पड़ी है। उस शक्ति को कुण्डलिनी कहते हैं। मैं यह अभ्यास खासकर उन लोगों से करवाता हूँ जो स्नायविक विघटन के फलस्वरूप आत्महत्या के लिए तत्पर या जीवन संग्राम से पलायन करना चाहते हैं। ऐसे लोग भी, जिनका मन इतना चंचल तथा बेचैन रहता है कि एक सेकेण्ड के लिये भी एकाग्र नहीं हो सकते, इसका अभ्यास कर सकते हैं।

क्रियायोग में कुछ भी गोपनीय नहीं है। किन्तु लोगों का यह आम विश्वास है कि क्रियायोग में बहुत कुछ गोपनीय है, जो गुरुओं तक ही सीमित रहता है तथा हर कोई क्रियायोग के लिये योग्य नहीं होता। यह एक गलत धारणा है। कुछ लोग यह भी सोचते हैं कि क्रियायोग का अभ्यास गृहस्थों के लिये नहीं है, क्योंकि वे ब्रह्मचर्य का पालन नहीं करते। यह समस्त विचारधारा कि

क्रियायोग केवल अविवाहितों तथा ब्रह्मचारियों के लिये ही है तथा गृहस्थों के लिये वर्जित है, एकदम गलत तथा निराधार है। तंत्र शास्त्र में, जो क्रियायोग का आधार है, इसका बड़ा स्पष्ट उल्लेख है। तंत्र कहता है कि जो अपने भीतर उस महान् शक्ति को जागृत करना चाहते हैं, वे चाहे विवाहित हों या अविवाहित, क्रियायोग अवश्य सीख सकते हैं।

मैं अनेक वर्षों से ध्यान, एकाग्रता तथा क्रियायोग का प्रशिक्षण दे रहा हूँ। ध्यान तथा क्रियायोग के अभ्यास में एक बड़ा अन्तर जो मुझे मिला वह यह कि ध्यान के लिये मात्र पाँच मिनट बैठने के बाद लोगों में हलचल प्रारंभ हो जाती है। वे थकावट अनुभव करने लगते हैं, किन्तु जब क्रियायोग में मैं उनसे आँखें न बन्द करने तथा एकाग्रता न करने के लिये कहता हूँ अथवा शरीर हिलाने के लिये कहता हूँ तो आपको यह सुनकर आश्चर्य होगा कि पन्द्रह मिनट के अभ्यास से ही वे आँखें बन्द कर ध्यान में उतर जाते हैं तथा मुझे उन्हें जबरदस्ती बाहर लाना पड़ता है! ध्यान तथा क्रियायोग में यही महत्वपूर्ण अन्तर है, जिसमें चेतना के संचार की प्रमुख भूमिका होती है। यदि मैं आपसे पूछूँ कि यह क्या कर रहे हैं तो आप कहेंगे, 'स्वामीजी, मुझे आँखें बन्द करने दीजिये, क्योंकि मैं ध्यान करना चाहता हूँ। अब मेरे लिये इस क्रिया में आगे बढ़ना असंभव है।' फिर भी मैं कहूँगा, 'आँखें खुली रखिये, भीतर ध्यान में न जाइये', परन्तु आप ध्यान में जाने की जिद्द करेंगे, क्योंकि आपके लिये बाहर रहना संभव नहीं हो पायेगा। क्या आपने कभी ऐसे अभ्यास के बारे में सुना है जिसमें गुरु शिष्य को बार-बार बाहर खींचे और शिष्य केवल ध्यान के आनन्द में मस्त एक ही जिद्द पकड़ ले कि मैं ध्यान करूँगा!

क्रियायोग के अभ्यास में हम बैठकर अपने शरीर को तनावयुक्त नहीं करते। क्रियायोग अत्यंत सरल, सहज एवं स्वाभाविक है। जैसे आप अपने पति, पुत्र अथवा पत्नी से बात करते अथवा कोई पुस्तक पढ़ते हैं, इसमें किसी प्रकार का संदेह या भ्रम नहीं होता। इसी तरह की सहज अवस्था में बैठकर आप चेतना को एक दिशा में संचारित करते हैं।

क्रियायोग में देश और काल के बन्धन का अतिक्रमण होता है, किन्तु चेतना का अतिक्रमण नहीं होता। आप किसी भ्रमपूर्ण अनन्तकाल में नहीं खोते। आपके पैर मजबूती के साथ यथार्थता पर स्थिर रहते हैं। यदि आपको कोई कार्य, उत्तरदायित्व, पारिवारिक बन्धन अथवा व्यापार आदि का झंझट न हो तो क्रियायोग के अभ्यास के बाद आप दस घंटे तक ध्यान में बैठ सकते

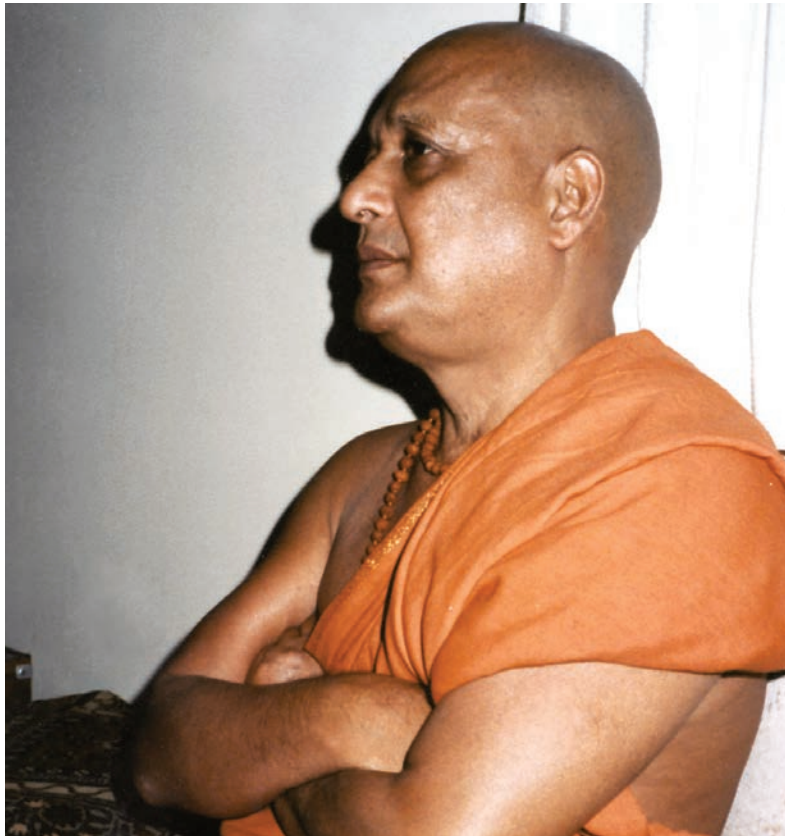

हैं, कोई समस्या नहीं होगी। किन्तु यदि आपकी उपर्युक्त परिस्थितियाँ हैं तो यह निश्चित समझिये कि इस अभ्यास के बाद आप अपने रोज के काम-काज में पूरी निष्ठा, तत्परता एवं आत्मविश्वास के साथ लग जाएँगे। इसी तात्पर्य से मैं कहता हूँ कि क्रियायोग की यात्रा पूरी तरह नियंत्रण में होती है।

जब मैंने सर्वप्रथम क्रियायोग का अभ्यास किया तो मेरा अनुभव बड़ा आश्चर्यजनक रहा। किन्तु यह सोचकर कि लोगों को इस विज्ञान की आवश्यकता नहीं है, मैंने इसे नहीं सिखाया। एक दिन एक अभागी, उच्चकुलीन महिला मेरे पास आई और मुझसे किसी ऐसी यौगिक क्रिया के विषय में पूछने लगी जिससे आत्महत्या करने में मदद मिल सके। मैंने उससे कहा कि यदि वह चाहे तो मेरे डेरे पर आ सकती है। प्रतिदिन सुबह वह भी मेरे साथ दस-बीस मिनट क्रियायोग का अभ्यास करने लगी। यह बड़ी पुरानी

बात है, और आज वह महिला इतनी सुखी है जितना मैंने अभी तक किसी को नहीं देखा। उस महिला ने न केवल अपना जीवन सुधारा, बल्कि आज वह सामाजिक कार्यों द्वारा हजारों लोगों के लिये उपयोगी बन गई है। जो विशाल धनराशि वह क्लबों में मनोरंजन आदि पर खर्च करती थी, आज लोगों की भलाई के कामों में लगा रही है। यह मेरा पक्का विश्वास है कि उसके व्यक्तित्व में जो महान् परिवर्तन तथा पुनर्जागरण आया, उसका प्रमुख कारण उसका दो-तीन माह तक मेरे साथ क्रियायोग का अभ्यास ही था।

इस प्रकार योग के दो विभाग होते हैं। प्रथम है मन को बाह्य जगत् के अनुभवों से खींचकर एकाग्रता, ध्यान तथा समाधि में ले जाना। यदि इसे कर सकते हैं तो करते जाइये, बड़ी अच्छी बात है, परंतु यदि आप ऐसा न कर सकें, यदि आपका मन चंचल बालक के समान उछल-कूद जारी रखे तो अच्छा होगा कि आप क्रियायोग पद्धति को अपनायें। इसके द्वारा किसी भी संघर्ष अथवा कठिनाई का निवारण कर सकते हैं। केवल पाँच या दस क्रियाएँ चुन लीजिये। इनका अभ्यास चंचल मन की किसी भी समस्या को हल करने में सहायक सिद्ध होगा।

जब मैं पेरिस में था तो वहाँ तीन दिनों की क्रियायोग कक्षा चलायी। इससे लोग इतने अधिक प्रभावित तथा लाभान्वित हुए कि मात्र तीन माह बाद वे मुझसे सैकड़ों-हजारों लोगों को क्रियायोग प्रशिक्षण देने के लिये आग्रह करने लगे। जब मैंने उनसे इतनी जल्दी पेरिस वापस बुलाने का कारण पूछा तो उनका उत्तर था कि 'उनके परिवार के अमुक व्यक्ति ने क्रियायोग सीखकर उसका अभ्यास किया तो उसमें इतना अधिक परिवर्तन आया। अतः अब हम भी क्रियायोग सीखना चाहते हैं।' यह है पेरिस के लोगों का जवाब, जहाँ सर्वप्रथम मैंने भारत के बाहर क्रियायोग का प्रशिक्षण दिया था।

जो लोग क्रियायोग सीखने के इच्छुक हैं उन्हें कम-से-कम पाँच माह तक आसन, प्राणायाम, मुद्रा, बन्ध, कुछ हठयोग की क्रियाओं, श्वसन की चेतना तथा अजपा-जप का अभ्यास करना चाहिए। इसके बाद ही क्रियायोग के किसी कुशल शिक्षक से इसे सीखना चाहिए। क्रियायोग के अभ्यास के लिये धर्म, जाति, सम्प्रदाय, मानसिक दशा अथवा भोजन आदि बाधक नहीं हैं। यदि आप यह मानते हैं कि क्रियायोग आपके लिये लाभदायक है तो आज से ही इसके लिये तैयारी प्रारंभ कर दीजिये।

– अगस्त 1968, कोपेनहेगन, डेनमार्क

योग के आयाम

योग आज अंतरराष्ट्रीय शब्द है। वर्तमान में ऐसा कोई भू-भाग या राष्ट्र या ऐसा कोई व्यक्ति नहीं जो इस शब्द से परिचित न हो तथा इस विज्ञान में रुचि न रखता हो। हाँ, हो सकता है, इस विषय में उनके विचार संदिग्ध हैं। उनकी धारणा है कि यौगिक क्रियायें सामान्य जीवन यापन करने वाले व्यक्ति से संबंध नहीं रखतीं बल्कि ये क्रियायें उस व्यक्ति विशेष के लिये हैं जो आत्म-साक्षात्कार चाहता है या जो किसी विशेष धर्म के अन्तर्गत आध्यात्मिक अनुभव प्राप्त करना चाहता है।

एक लघु प्रवचन में योग की उन असीम संभावनाओं एवं अनन्त शक्तियों का विस्तारपूर्वक वर्णन करना असंभव है जो मानव जीवन के विकास एवं मानव मस्तिष्क से संबंधित हैं। इसलिए इस महान् विज्ञान का संक्षिप्त परिचय ही दूँगा, जिसने निराश एवं असफल व्यक्तियों में आशा का संचार किया है।

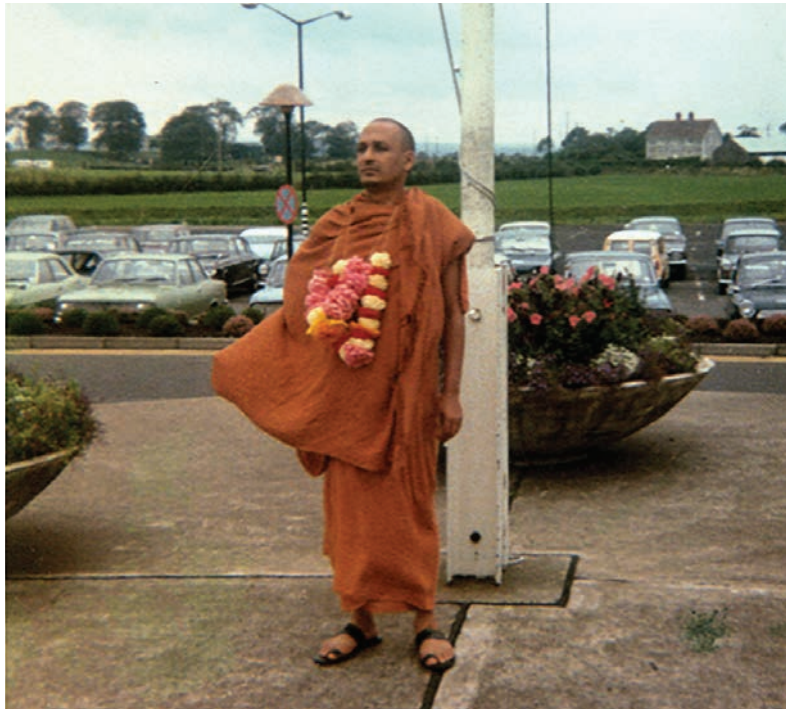

लगभग पन्द्रह वर्ष पूर्व जब मैंने विश्व में योग प्रचार प्रारम्भ किया तब मुझे इस बात की कल्पना भी नहीं थी कि पाश्चात्य देशों के सुख-सम्पन्न, उच्च शिक्षा प्राप्त सुसंस्कृत लोगों के लिये योग प्राणदायिनी शक्ति का कार्य करेगी। परन्तु आज कई देशों में हजारों की संख्या में युवा वर्ग, नशीली दवाओं के सेवन के परिणामस्वरूप विक्षिप्त मानसिक स्थिति में हैं तथा उनका जीवन निष्क्रिय हो गया है। ऐसी स्थिति में योगाभ्यास द्वारा उन्हें पुनर्जीवन की प्राप्ति हो रही है। औषधियों की उपलब्धि होते हुए भी योग ही उनके निराश जीवन में आशा का संचार कर रहा है। सभ्यता के विकास के साथ ही तनाव के कारण मनुष्यों में मनोवैज्ञानिक विकारों की उत्पत्ति अधिक हो रही है। इन मनोवैज्ञानिक समस्याओं का समाधान तथा इन मानसिक रोगों का निराकारण भी योगाभ्यास द्वारा सम्भव है। बिगड़े बच्चों और अपराधी व्यक्तियों के पूर्ण व्यक्तित्व को सुधार कर परिवर्तित करने में भी विधिवत् योगाभ्यास द्वारा अच्छे परिणाम की प्राप्ति हुई है।

योग की परिभाषा क्या है? संक्षेप में योग ऐसी विधि है जिसमें शारीरिक, मानसिक तथा आध्यात्मिक अभ्यासों के द्वारा चेतना को विकसित एवं अधिक शक्तिशाली बनाया जाता है। योग का शाब्दिक अर्थ है – जोड़ना, मिलाना, एक करना अथवा एक-दूसरे में समाविष्ट करना। दूसरे शब्दों में कहा जा सकता है कि योग ऐसी प्रक्रिया है जो व्यक्ति की निम्न चेतना का योग उसके उच्चतम एवं अपेक्षाकृत शक्तिशाली चेतना से करती है।

मनुष्य की चेतना का क्रमिक विकास हो रहा है। यह विकास प्रकृति के निश्चित नियम के आधार पर हो रहा है, और यह शनैः शनैः हो रहा है। इस गति से कई हजार वर्षों के पश्चात् चेतना का विकास हो जायेगा। लेकिन योगाभ्यास के द्वारा चेतना के विकास की गति में वृद्धि की जा सकती है तथा इसी जन्म में चेतना का पूर्ण विकास किया जा सकता है।

योगाभ्यास क्या है? सर्वप्रथम इस विषय को स्पष्ट कर देता हूँ। सामान्यतः आसन-प्राणायाम को ही सम्पूर्ण योगाभ्यास मान लिया जाता है, परन्तु यह अवधारणा गलत है। योगाभ्यास के अन्तर्गत आसन-प्राणायाम आवश्यक अवश्य हैं, परन्तु ये योग के प्राथमिक अभ्यास हैं। जीवन में योग को ग्रहण करने के लिये सर्वप्रथम इन्हीं का अभ्यास प्रारम्भ करना अनिवार्य है। साथ ही मैं यह भी समझा देना चाहता हूँ कि हठयोग के अन्तर्गत आने वाले ये शारीरिक व्यायाम अर्थात् आसन एवं श्वसन क्रियायें अर्थात् प्राणायाम

केवल शारीरिक दोषों का निवारण ही नहीं करते, बल्कि वैज्ञानिकों के लिये ये शोध विषय हैं क्योंकि ये अभ्यास मनुष्य की ग्रंथियों पर प्रभाव डालते हैं। एड्रीनल, थायराईड आदि ग्रंथियों पर इनका प्रभाव पड़ता है। मानस पटल पर अभ्यासों का प्रभाव पड़ता है। इसलिए चिंता, निराशा, बेचैनी, अनिद्रा आदि मानसिक एवं मनोवैज्ञानिक रोगों का निवारण इन अभ्यासों के माध्यम से किया जा सकता है।

इन अभ्यासों के विषय में यह बात आश्चर्यजनक एवं सत्य है कि आत्महत्या के लिये उठे विचारों में भी इनके द्वारा परिवर्तन लाया गया है। यह रोग आज की पीढ़ी में आमतौर पर व्याप्त है। आसन-प्राणायाम द्वारा उनकी इन विषैली ग्रंथियों को मूलतः परिवर्तित कर दिया जाता है। हमारी रीढ़ की हड्डी के मूल में नीचे की ओर 'मूलाधार' नामक आध्यात्मिक चक्र है। इसका संबंध पूर्ण मस्तिष्क से है। योगाभ्यास द्वारा आत्महत्या के लिये इच्छुक व्यक्तियों के मूलाधार चक्र में प्राणशक्ति भेजी जाती है। यह बड़ा ही शक्तिशाली केन्द्र है। इसे शक्ति मिलने पर मानस पटल पर स्वस्थ प्रभाव पड़ता है, धार्मिक या मनावैज्ञानिक रूप से बिना प्रत्यक्ष उपचार के भी व्यक्ति के विकारों का नाश हो जाता है। व्यक्तिगत मनोवैज्ञानिक प्रवृत्तियों में परिवर्तन आ जाता है। यह बात पूर्णतः सत्य है। आसन के विषय में मैं इससे अधिक विस्तारपूर्वक वर्णन नहीं करूँगा।

प्राणायाम मानसिक बेचैनी या अशांति को दूर करने में बहुत उपयोगी है। वैज्ञानिकों ने इसका भली-भाँति परीक्षण कर लिया है। मस्तिष्क ही हमारे मानसिक व्यवहारों के लिये उत्तरदायी है। जब मन अशांत होता है तो प्रतिक्रिया स्वरूप ऐसे विचार उत्पन्न होते हैं जो कार्यों एवं भावनाओं में कठिनाई या समस्या उत्पन्न कर देते हैं। प्राणायाम द्वारा सम्पूर्ण मस्तिष्क या बुद्धि में शक्ति का संचार किया जाता है। इस शक्ति को प्राणशक्ति कहा जाता है जो प्रत्येक मनुष्य में निहित शक्ति है।

अब मैं ध्यानयोग के विषय में बताऊँगा। पश्चिमी देशों में ध्यान को किसी विशेष चीज पर विचारने की प्रक्रिया माना जाता है, परन्तु मैं ध्यान को एक चेतन प्रक्रिया कहूँगा, जिसके द्वारा हम अपनी उच्च-चेतना के समीप आना चाहते हैं। ध्यान के इस अभ्यास में व्यक्ति विशेष अपने मानस पटल का पूर्ण ज्ञान प्राप्त करना चाहता है, साथ ही मस्तिष्क की असीम एवं अनंत शक्तियों के प्रशिक्षण एवं व्यस्थित करने की विधि ज्ञात करना चाहता है। ध्यान की विधि

बहुत कठिन नहीं है। वास्तव में ध्यान में क्या होता है? ध्यान के द्वारा व्यक्ति शारीरिक एवं मानसिक शांति प्राप्त करता है, प्राण संस्थान में संतुलन लाता है तथा अपनी सामान्य चेतना को जाग्रत कर उच्च चेतना तक पहुँचना चाहता है। इस क्रिया को अत्यधिक कठिन न समझिये। इसकी विधि में व्यक्तिगत भिन्नता होती है, इसलिए यह पता लगाना कठिन है कि किस व्यक्ति के लिये कौन-सी विशेष विधि उपयुक्त है। एक व्यक्ति ध्वनि पर ध्यान कर सकता है तो दूसरा शरीर के किसी बिन्दु विशेष पर। कुछ व्यक्ति श्वास पर एकाग्रता रख सकते हैं तो दूसरे व्यक्ति बाह्य या आंतरिक वस्तु पर ध्यान करने में समर्थ होते हैं। व्यक्तित्व के विकास के आधार पर ध्यान की वस्तु निश्चित की जाती है तथा दृढ़ता से उसका पालन किया जाता है।

ध्यान की सैकड़ों-हजारों विधियाँ है। उनमें से एक सरल विधि का मैं सैद्धांतिक रूप से वर्णन करूँगा। वह आपके लिये संभवतः उपयुक्त हो। यह परिचय मात्र है कि ध्यान का आंरभ किस भाँति किया जाये। यह गलत विचार न रखिये कि ध्यान की एकमात्र यही विधि है।

प्रारम्भिक अवस्था में आप सोफा या आराम कुर्सी पर बैठ सकते हैं। बाद में आपको पद्मासन या सिद्धासन जैसे किसी ध्यान के आसन में बैठना होगा। प्रारम्भ में ध्यानावधि एक बार में 10 मिनट से अधिक न हो। तात्पर्य यह है कि 10 मिनट तक आंखें बंद रहें तथा किसी अंग में हलचल न की जाये। 10 मिनट के लिये रीढ़ की हड्डी ऊपर सीधी तनी रहे। चाहे आप कुर्सी में बैठें या नीचे आसन लगाकर, लेकिन महत्त्वपूर्ण बात यही है कि रीढ़ सीधी रहे। इसका नियंत्रण केन्द्रीय नाड़ी संस्थान तथा पूर्ण मानस पटल पर रहता है। आसन एवं प्राणायाम के पश्चात् ध्यानाभ्यास करिये, पूर्व नहीं।

इस प्रकार नेत्र बंद कर रीढ़ को सीधी रख, तनावरहित अवस्था में बैठकर तुरन्त ही ध्यान का प्रयत्न नहीं करना चाहिये। एक लम्बी अवधि के पश्चात् एकाग्रता आती है, प्रारम्भिक दिन से ही नहीं। सर्वप्रथम जागरूक रहने का अभ्यास करिये। एकाग्रता एवं जागरूकता में भेद है। जागरूकता स्वतः आ जाती है, जबकि एकाग्रता हेतु प्रयास करना पड़ता है।

सबसे पहले आँख बन्द कर एक या आधा मिनट के लिये सम्पूर्ण शरीर का ध्यान करिये। उस समस्त शारीरिक ढाँचे का ख्याल करिये, जिसमें आप 20, 30, 40, 50 वर्ष से रहते आ रहे हैं तथा चारों ओर चलते-फिरते हैं। मात्र आधा या 1 मिनट के लिये शरीर सजगता का विषय रहे, अधिक देर के लिए नहीं।

इसके पश्चात् स्थिरता या शारीरिक दृढ़ता के प्रति सचेत बनिये। कई व्यक्ति स्थिर रहते हैं, परन्तु इसके प्रति सचेत नहीं रहते। इसे अचेतन स्थिरावस्था कहेंगे, परन्तु ध्यान की क्रिया में व्यक्ति को इसके लिये सचेत रहना होगा। 'मैं स्थिर हूँ तथा इसका ज्ञान मुझे है कि मैं स्थिर हूँ', ऐसी चेतना बनी रहनी चाहिये।

मूर्ति की भाँति स्थिर हो जाने के बाद तथा उसके प्रति जागरूक रहने के पश्चात् स्वाभाविक श्वास पर अपनी चेतना को लाइये। इस बात का सभी को ज्ञान है कि हम श्वास लेते हैं, परन्तु हम उसके प्रति सजग नहीं रहते। इस क्रिया में श्वसन क्रिया पूर्णतः स्वाभाविक गति से चलती है, परन्तु उसके प्रति हमारी चेतना बनी रहती है। 'मैं श्वास ले रहा हूँ, मैं श्वास छोड़ रहा हूँ . . .' की चेतना बनी रहे। एक या दो मिनट तक निरन्तर यह चेतना बनी रहे।

जिस श्वास के विषय में मैं चर्चा कर रहा हूँ उसका अनुभव विभिन्न अंगों में करिये। उदाहरण के लिए – नासिका, गला तथा दोनों के बीच में श्वास का आना-जाना, भ्रूमध्य से पीछे एवं आगे श्वास का आना-जाना आदि पर कुछ क्षणों के लिये अपनी चेतना को ले जाइये। तत्पश्चात् शरीर के भिन्न-भिन्न प्रदेशों में चेतना को ले जाइये। ये चार बातें मैंने बतायीं, और भी अनेक बातें इस विधि के अंतर्गत आती हैं।

तत्पश्चात् किसी मन्त्र या ध्वनि विशेष को श्वास के साथ जोड़िये। भ्रूमध्य में आगे-पीछे श्वास का अनुभव करते हुये मानसिक रूप से मन्त्रोच्चारण करिये। पहले श्वास पर चेतना लाइये, फिर किसी मन्त्र का मानसिक उच्चारण उसके साथ करिये।

वर्णित बातों का अभ्यास कुछ समय के लिये करिये तत्पश्चात् ध्यान का केन्द्र खोज निकालिये तथा ध्यान के ध्येय का निर्णय करिये। अब निर्धारित केन्द्र बिंदु पर उस ध्येय का ध्यान करिये। मूलाधार चक्र, अनाहत चक्र या आज्ञा चक्र पर ध्यान किया जा सकता है। इसके अतिरिक्त अन्य चक्र भी हैं। इस बात का पता लगाकर ध्यान के चक्र का निर्णय करना होगा कि व्यक्ति विशेष का कौन-सा चक्र अपेक्षाकृत अधिक विकसित है।

जोर लगाकर प्रयास मत करिये, तनाव नहीं आना चाहिये। यदि ध्येय वस्तु स्वाभाविक रूप से ध्यान में आती है तो ठीक है, अन्यथा उस समय बलपूर्वक लाने का प्रयास न करिये। दूसरी, तीसरी बैठक में अर्थात् दूसरे दिन, तीसरे दिन पुनः स्वाभाविक रूप से लाने की कोशिश करिये। हफ्तों, महीनों और वर्षों तक अपने निश्चित बिंदु पर ध्यान करते जाइये। यदि ध्यान सही है तो सम्पूर्ण शरीर में प्राणशक्ति का संचार होने लगेगा।

प्रारम्भ में प्रतिदिन एक बार अभ्यास करिये। करीब एक माह पश्चात् 10-10 मिनट के लिये दो बार ध्यान का अभ्यास करिये। बिना तनाव के आँख बन्द कर ध्यान करिये। कुछ दिन अच्छा ध्यान हो सकता है। कभी ध्यान खूब अच्छी तरह न भी हो, तो भी इसकी चिंता किये बिना अभ्यास करते जाइये। यदि निरन्तर अभ्यास किया तो विलम्ब से या जल्द ही एक भिन्न, उच्च चेतना का विकास होगा। आपके अनजाने ही ध्यान इस अवस्था तक पहुँच जायेगा। इस प्रकार अभ्यास करते रहने से आत्मज्ञान होगा। इस अवस्था में इस अभ्यास का त्याग कर ऊँची साधना करिये।

– 1970, बेलफास्ट, आयरलैण्ड

अच्छा क्या, बुरा क्या?

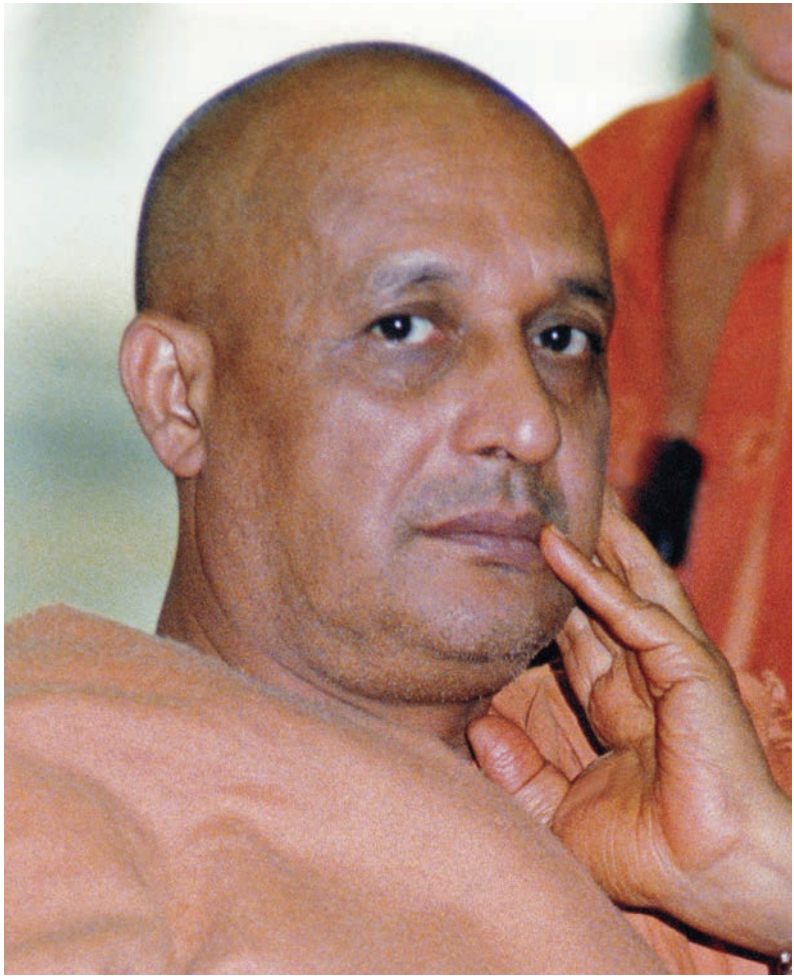

चूँकि मेरा जन्म हिन्दू परिवार में हुआ था, इसलिये मैंने अच्छे और बुरे के विषय में बहुत कुछ सुना है। मैं इस निष्कर्ष पर पहुँचा हूँ कि मनुष्य को अच्छा बनाने की दिशा में समस्त धर्म विफल सिद्ध हुए हैं। जिन्होंने विश्व इतिहास का अध्ययन किया है वे जानते हैं कि संसार में जितना नरसंहार और खून खराबा हुआ है उसके लिए प्राय: धर्म ही उत्तरदायी है। अतीत में ही नहीं, आज भी धर्म

के नाम पर अनेक बुरे कार्य और हत्याएँ होती हैं। धर्म सामाजिक-राजनैतिक सिद्धान्तों के अतिरिक्त कुछ भी नहीं रह गये हैं। अंग्रेजी के 'रिलिजन' शब्द का अर्थ 'फिर से जोड़ना' होता है, परन्तु आज तो धर्म अपने वास्तविक अर्थ से बहुत दूर चला गया है। मानव की आत्मा विश्वात्मा से अलग हो जाती है, जो उसे पुनः अपने स्रोत से जोड़ सके वही धर्म कहलाता है, परन्तु क्या आज विश्व का कोई धर्म ऐसा कर रहा है? अनेक धर्म तो मात्र अपने अनुयायियों की संख्या बढ़ाने तक ही सीमित रह गये हैं। इसलिए धर्म हमें यह बिल्कुल नहीं सिखा सकता कि अच्छा क्या है, बुरा क्या है।

एक महत्त्वपूर्ण बात यह है कि अच्छे और बुरे की सर्वमान्य अन्तिम व्याख्या आज तक नहीं हो सकी है। भारत तथा विश्व के महान् दार्शनिक मनीषियों ने शुभ और अशुभ, अच्छे तथा बुरे की व्याख्या करने का प्रयत्न किया था, परन्तु उनकी समस्त परिभाषाएँ सापेक्ष हैं। जो आज से पचास वर्ष पूर्व अच्छा था, वही आज बुरा है और जो आज बुरा है, हो सकता है वह इक्कीसवीं शताब्दी में अच्छा माना जाये। फिर यह प्रश्न उठता है कि हम अच्छे-बुरे, सही-गलत का निर्णय करने वाले कौन होते हैं? जो अभी अच्छा है, वही अगले क्षण बुरा हो सकता है। इसे समझाने के लिए मैं एक दृष्टान्त सुनाता हूँ।

एक बार एक किसान का घोड़ा खो गया। पड़ोसी उसके पास आकर अपनी संवेदना प्रकट करने लगा, परन्तु किसान बोला, 'यह कौन जानता है कि अच्छा क्या है और बुरा क्या है।' किसान की यह बात कुछ दिन बाद सही पाई गयी, क्योंकि उसका घोड़ा न केवल घर लौट आया, बल्कि वह अपने साथ जंगल के घोड़ों का एक झुंड भी ले आया। वे सबके सब उसके पालतू मित्र हो गये। अब किसान का पड़ोसी आकर उसे बधाई देने लगा, परन्तु किसान ने वही बात दुहराई जो उसने पड़ोसी से पहले दिन कही थी। पुनः उसकी यह बात सही सिद्ध हुई, क्योंकि अगले दिन किसान का पुत्र एक जंगली घोड़े पर से गिर पड़ा और उसकी टांग टूट गई। पड़ोसी फिर आकर अपनी संवेदना जताने लगा और किसान ने तीसरी बार भी अपनी वही बात दुहराई कि अच्छा क्या है और बुरा क्या, इसे कोई नहीं जानता। इस बार भी उसका कथन सही निकला, क्योंकि अगले ही दिन उसके नगर में सैनिक अधिकारी आए और स्वस्थ नौजवानों को सेना में भरती करने लगे, क्योंकि युद्ध चल रहा था तथा अधिक सैनिकों की आवश्यकता थी।

चूँकि किसान के बेटे का पैर टूटा हुआ था, इसलिए वह सेना में भर्ती होने से बच गया।

भले ही सही और गलत, अच्छे और बुरे, शुभ और अशुभ की एकदम सही व्याख्या संभव न हो, परन्तु कुछ ऐसे सनातन मूल्य हैं जो सामाजिक नहीं बल्कि आध्यात्मिक कहे जा सकते हैं। वे क्या हैं? इस विषय पर हमें विचार करना चाहिए। महत्त्वपूर्ण बात यह है कि अच्छाई को अभिव्यक्त करने के लिए एक भिन्न प्रकार का मन चाहिए। बुराई से बचने के लिए आपको सबल मन की आवश्यकता है। यदि मैं पीलिया का मरीज हूँ तो मुझे सर्वत्र पीला दिखेगा। यदि कोई वस्तु नीली होगी तो भी वह मुझे पीली ही दिखेगी, क्योंकि मेरी आँखों में पीलिया छाया हुआ है।

कमजोर मन द्वारा आप सद्गुणों को कैसे अपना सकते हैं? मेरा विश्वास है कि यह तब तक सम्भव नहीं जब तक आप अपने मन का गुणात्मक परिवर्तन नहीं करते। यदि आपको सीधी पहाड़ी पर चढ़ना है तो आपके पैरों को सशक्त होना चाहिए। यदि आप तीसरी मंजिल पर तीस-चालीस किलो का बोझ उठाकर चढ़ते हैं तो इसके लिए आपकी मांसपेशियों का मजबूत होना आवश्यक है। आप अपने दो वर्ष के बच्चे से उस बोझ को उठाने की अपेक्षा नहीं कर सकते। इसी प्रकार यदि आप जीवन में अच्छा व्यवहार करना चाहते हैं तो अपने मन में गुणात्मक सुधार लाना आवश्यक है।

आप अपने मन में गुणात्मक परिवर्तन कैसे ला सकते हैं? क्या केवल पुस्तकें पढ़कर? कदापि नहीं। इसके लिए आपको अपने मन का पूर्णरूपेण रूपान्तरण करना होगा। तंत्र में तो अच्छा-बुरा कुछ भी नहीं होता। उसमें एक उक्ति मिलती है जो कहती है, 'मनुष्य को उसी वस्तु के माध्यम से उन्नति करनी चाहिए जो उसे पतन की ओर ले जाती है।' अन्य शब्दों में, जिसे आप बुरा मानते हैं, उसका भी अच्छाई के लिए उपयोग कर सकते हैं।

बुरा क्या है? यह मन का अज्ञान है। अच्छा क्या है? वह ज्ञान है जिसे आपे गहरे ध्यान में प्राप्त कर सकते हैं। समाज में तो अच्छे-बुरे का अस्तित्व हमेशा रहेगा, आप उसे निर्मूल नहीं कर सकते। धर्म निरन्तर अच्छे-बुरे की व्याख्या करता रहेगा, परन्तु तंत्र के अनुसार हम अपने उत्थान की यात्रा किसी भी बिन्दु से प्रारम्भ कर सकते हैं।

– 15 मई 1980, स्टॉकहोम, स्वीडन

ध्यान योग

विगत पचास वर्षों में योग ने मानवता को महान् संकटों से उबारा है। योगाभ्यास द्वारा विश्व में बड़े परिवर्तन हुए हैं। हठयोग लोगों में योग के अन्य अंगों की अपेक्षा अधिक लोकप्रिय हुआ है, और बहुत कम लोग ध्यानयोग की ओर प्रवृत्त हुए हैं। ध्यानयोग योग का मेरुदण्ड कहा जा सकता है। ध्यानयोग मानव के भविष्य और प्रारब्ध के निर्माण में अहम् भूमिका निभाएगा।

मेरा विश्वास है कि आप ध्यानयोग के विषय में कुछ-न-कुछ अवश्य जानते होंगे। ध्यान के लिये अंग्रेजी में 'मेडिटेशन' शब्द प्रयुक्त होता है। ध्यानयोग को समग्र चेतना का योग कहा जाता है। जब आपका मन किसी विषय पर एकाग्रतापूर्वक चिन्तन करता है, तो उस अवस्था को ध्यान कहते हैं। मनुष्य का मन इतना चंचल और विक्षिप्त रहता है कि वह किसी भी वस्तु को उसके समग्र रूप में नहीं पकड़ सकता। ध्यान कोई ऐसी वस्तु नहीं है जो पलक झपकते सिद्ध हो सके। इसके लिए वर्षों तक नियमित रूप से प्रतिदिन अभ्यास करना पड़ता है।

ध्यान में क्या होता है? क्या आप ध्यान में अपने जीवन को विस्मृत कर देते हैं? क्या आप यथार्थ से पलायन करते हैं? अथवा, क्या आप ध्यान में होश खो बैठते हैं? अनेक ऋषियों, मनीषियों तथा आधुनिक वैज्ञानिकों का यह अनुभूत निष्कर्ष है कि ध्यान की अवस्था में ध्याता के मन का महान् रूपान्तरण होता है। आगे चलकर यही रूपान्तरण उसकी चेतना के उत्थान में सहायक होता है।

आप अपने बच्चों को स्कूल, कॉलेज और विश्वविद्यालय भेजते हैं, ताकि उनका बौद्धिक विकास हो सके, परन्तु आप अपनी मानसिक क्षमता को कुशाग्र करने के निमित्त क्या करते हैं? आज हममें से अनेक लोग अपने जीवन में बड़ी उथल-पुथल का सामना कर रहे हैं क्योंकि हमारा जीवन सम्बन्धी ज्ञान अपर्याप्त और एकांगी है। यदि आप किसी एस्किमो जाति के व्यक्ति को जर्मनी के किसी महानगर में लाकर छोड़ दें, तो वह यहाँ के जीवन के साथ सामंजस्य स्थापित नहीं कर पायेगा और संभवतः शहर के किसी व्यस्त मार्ग पर दुर्घटना का शिकार हो जायेगा। ठीक इसी प्रकार हमारा अप्रशिक्षित मन भी आधुनिक जीवन के कटु यथार्थों का सामना करने में असमर्थ होता है।

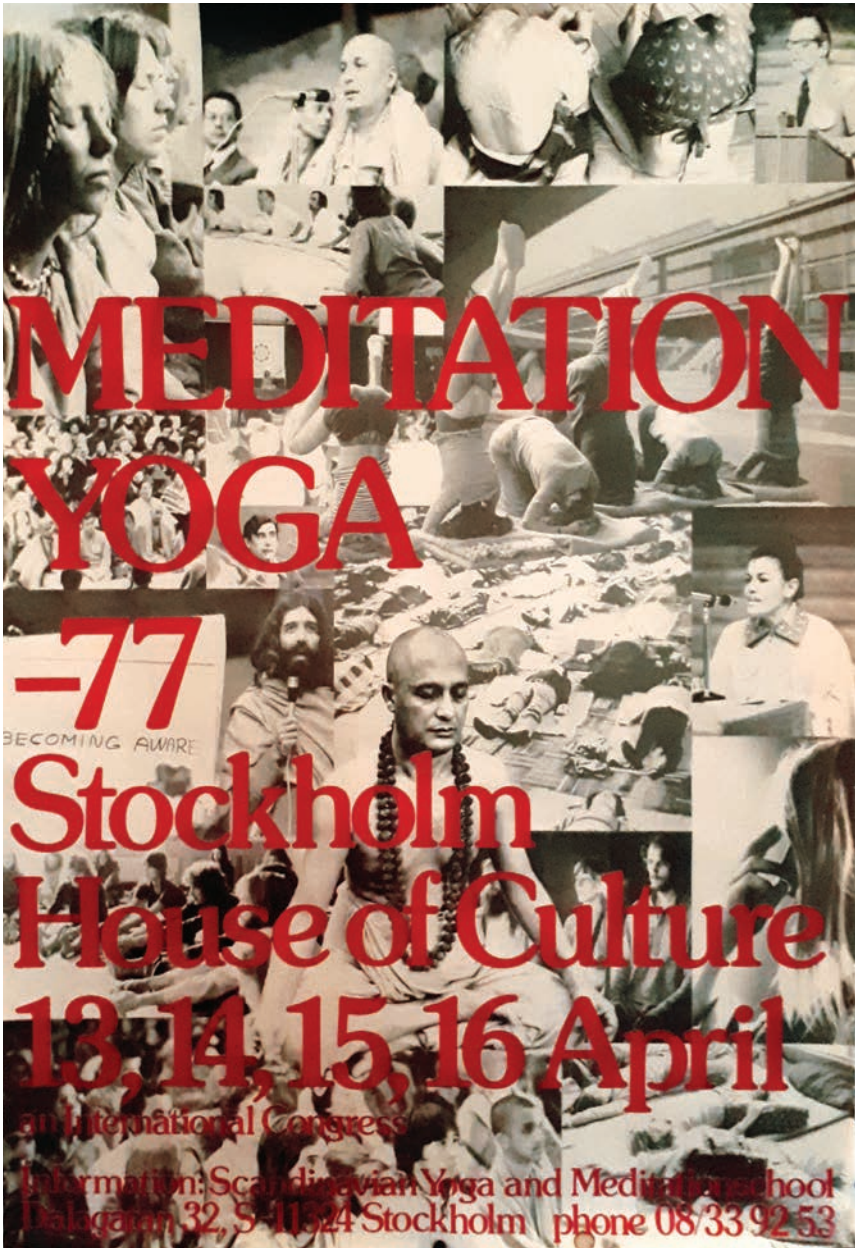
MEDITATION
YOGA
-77
BECOMING AWARE
Stockholm
House of Culture
13, 14, 15, 16 April
an International Congress
Information: Scandinavian Yoga and Meditation School
Hälsingegatan 32, S-113 24 Stockholm | phone 08/33 92 53

आधुनिक सभ्यता ने हमें सब कुछ दिया है, परन्तु हमारा मन उनका समुचित, लाभदायक उपयोग नहीं कर पाता। सजे-धजे भव्य भवनों में आरामदायक बिस्तरों पर हम पूरी रात बेचैनी से करवटें बदलते हुए गुजारते हैं। सुन्दर पत्नी तथा प्यारे बच्चों के साथ आप परेशानी तथा भय से युक्त जीवन जी रहे हैं। अच्छा खासा बैंक-बैलेंस तथा जीवन के समस्त आमोद-प्रमोद के बीच आप अतृप्त जीवन जीते हैं। क्या यह सब कुछ असमर्थ तथा रुग्ण मन का परिणाम नहीं है? आपकी जेब में सब कुछ है, परन्तु आप कुछ भी उपयोग नहीं कर पाते। इसका सीधा कारण यह है कि आपका मन जीवन की विभिन्न परिस्थितियों से नहीं निपट सकता। यही कारण है कि आज विश्व में लाखों-करोड़ों लोग दुःखी हैं।

मनुष्य के दुःखों का कारण सामाजिक अथवा आर्थिक नहीं है। उसके दुःखी होने का कारण उसका अपना बीमार मन है। यदि आप दुःखी हैं तो यह समझिए कि आपके मन का आमूल रूपान्तरण और उपचार आवश्यक है, और इस कार्य के लिए केवल ध्यानयोग ही रामबाण युक्ति है। यह हमेशा याद रखिये कि ध्यान निष्क्रिय नहीं है, बल्कि एक गत्यात्मक प्रक्रिया है और केवल गत्यात्मक प्रक्रिया ही मन में परिवर्तन ला सकती है। इससे मन अधिक सक्षम, मजबूत और सामंजस्यपूर्ण होता है। अब प्रश्न यह उठता है कि ध्यान कैसे करें?

ध्यान का आरम्भ शरीर की तैयारी से होता है। इसके अन्तर्गत तंत्रिका-तंत्र, हृदय, श्वसन-संस्थान और मस्तिष्क आदि सबकी तैयारी आवश्यक है। शरीर की तैयारी के निमित्त हठयोग का अभ्यास करना चाहिए। हठयोग को मात्र शारीरिक व्यायाम समझना भूल है। हठयोग वह अचूक युक्ति है जिसके द्वारा हमारे अनुकंपी तथा परानुकंपी तंत्रिका-तंत्रों में स्वस्थ संतुलन आता है। इसके अतिरिक्त आसन, प्राणायाम, मुद्रा तथा बंध के नियमित अभ्यास द्वारा ध्यानयोग की तैयारी पूर्ण होती है।

ध्यान मात्र मानसिक क्रिया नहीं है। यह शरीर को प्रभावित करता है। इसका प्रभाव हृदय, पाचन-संस्थान, हॉर्मोन-समूह तथा अन्तःस्रावी ग्रन्थियों पर भी पड़ता है। यह भी देखा गया है कि ध्यान में मस्तिष्क की तरंगों का स्वरूप बदलता है। ध्यान का प्रमुख लाभ यह है कि इससे मस्तिष्क के निष्क्रिय तथा अर्द्धसुप्त केन्द्र जागते तथा सक्रिय होते हैं। निश्चय ही प्रत्येक व्यक्ति का लक्ष्य अपने मस्तिष्क के अज्ञात निष्क्रिय खंडों को सक्रिय बनाना

तथा आलोकित करना है, ताकि वह पूरी जानकारी और सजगता के साथ जीवन का आनन्द ले सके। ध्यान का सबसे सरल तरीका यह है कि अपने भीतर किसी वस्तु के प्रति पूरी तरह सजग हो जाइये। इससे समूचा मस्तिष्क क्रियाशील हो जाता है। इस प्रकार ध्यानयोग का लक्ष्य मानव की समग्र चेतना का विकास करना है।

– 8 मई 1980, फ्रेंकफर्ट, जर्मनी

तंत्र शास्त्र का इतिहास

तंत्र एक अति प्राचीन विज्ञान है जिससे मानव अटलांटिस सभ्यता के पूर्व से परिचित है। इस विज्ञान का उद्भव कब हुआ, मैं नहीं कह सकता, परन्तु मैं इतना बता सकता हूँ कि यह किस प्रकार अस्तित्व में आया। मान लीजिये, हम अत्यन्त सीधे-सादे पचास लोग एक गाँव में रहते हैं। हम योग से बिल्कुल अनभिज्ञ हैं। अचानक कोई व्यक्ति आपसे ऊँची-ऊँची बातें करने लगता है, भविष्यवाणियाँ करता है तथा लोगों को रोगमुक्त करता है। मानो वह कोई जादू करता है। यह सब देखकर हम जिज्ञासावश पूछने लगते हैं – 'वह क्या कर रहा है? उसका मस्तिष्क किस प्रकार का है? वह यह सब कुछ कैसे जान लेता है? उसने अमुक व्यक्ति को किस प्रकार रोगमुक्त किया? उसे क्या हो गया है?'

बस यहीं से तंत्र प्रारम्भ होता है। ऐसी विलक्षण प्रतिभा वाले व्यक्तियों की अचानक एवं स्वतःस्फूर्त्त अभिव्यक्ति ने लोगों का ध्यान आकर्षित कर उन्हें सोचने तथा पूछताछ करने के लिए बाध्य किया कि 'यह सब कैसे हो सकता है?' प्रारम्भ में तो इन चमत्कारों का मूल कारण भूत, प्रेत, ईश्वर, शैतान आदि को बताया गया। लोग कहते, 'अरे! यह सब ईश्वर ने किया है' या 'किसी भूत-प्रेत ने किया है' या 'किन्हीं सूक्ष्म शक्तियों ने किया है।' धीरे-धीरे लोगों का चिन्तन परिष्कृत हुआ और वे मानने लगे कि, 'नहीं, उसने अपने मन को, अपनी प्राणशक्ति को रूपान्तरित कर लिया है।'

अगला प्रश्न यह उपस्थित हुआ, 'यह रूपान्तरण क्या है? यदि तुम कोई भविष्यवाणी करते हो या रोग-उपचार करते हो तो यह कैसे हो पाता है?' इसके बाद लोगों ने मन के रूपान्तरण की युक्तियाँ खोज निकालीं। कालान्तर में उन्होंने आसन, प्राणायाम, मुद्रा, बंध, मंत्र, यंत्र, मण्डल आदि की खोज की। इन्हीं सबसे मिलकर योग का तानाबाना तैयार हुआ। तंत्र यदि सैद्धान्तिक पक्ष है तो योग उसका व्यावहारिक पक्ष है।

जहाँ तक हमारी जानकारी है, इतिहास बताता है कि अटलांटिस सभ्यता के लोग योग से परिचित थे। इसके बाद समूचे दक्षिण अमेरिका में योग का अभ्यास किया जाने लगा। दक्षिण अमेरिका में अनेक ऐसे खुले संग्रहालय हैं जहाँ योग के विभिन्न आसनों, क्रियाओं तथा मुद्राओं को व्यक्त करने वाली

अनेक अति प्राचीन प्रस्तर मूर्तियाँ, तस्वीरें आदि सुरक्षित रखी हैं, जिनका निर्माण हजारों साल पहले हुआ।

अटलांटिस सभ्यता की समाप्ति के बाद योग संस्कृति भी एकाएक लुप्त हो गई। उसके बाद एकेश्वरवादी धर्मों की एक बाढ़-सी आई। लगभग दो से चार हजार वर्षों का काल चार प्रमुख एकेश्वरवादी धर्मों – पारसी, ईसाई, यहूदी तथा इस्लाम के वर्चस्व का युग रहा। इन धर्मों के आगमन के कारण आध्यात्मिक विद्या और विज्ञान की उन्नति अवरुद्ध हो गई, क्योंकि इन एकेश्वरवादी धर्मों में समायोजन की भावना का अभाव रहा है। ऐसे धर्मों में, जिनमें ईश्वर के सर्वत्र और सभी रूपों में दर्शन किये जाते हैं, समायोजन की पर्याप्त गुंजाइश होती है। इसी कारण भारत में योग विज्ञान जीवित रहा।

– 14 मई 1980, स्टॉकहोम, स्वीडेन

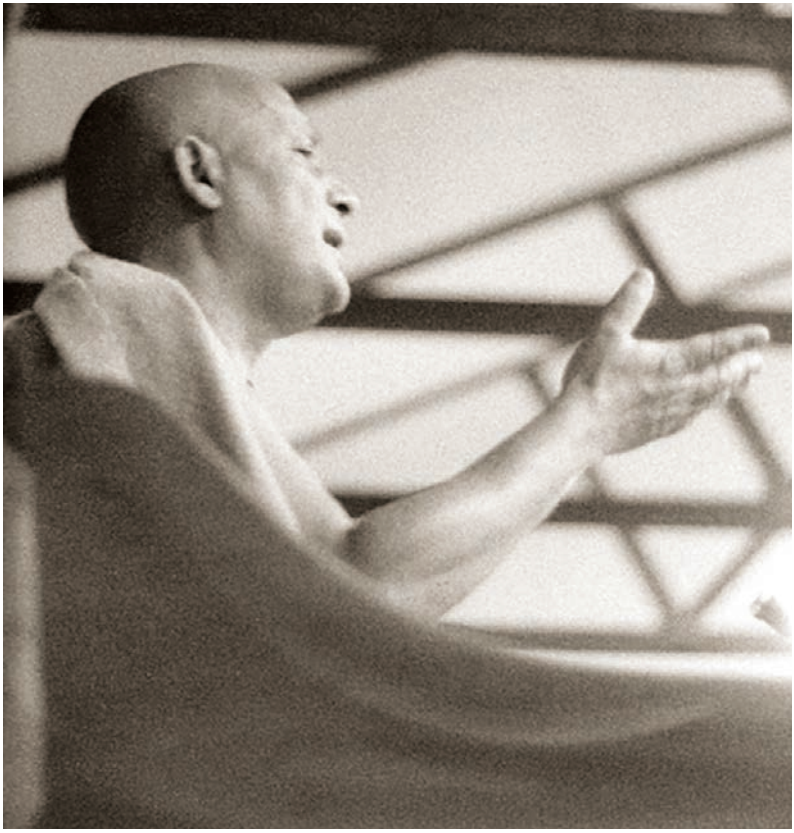

प्रत्येक गुरु दिव्य-आलोक हैं

मेरा विश्वास है कि प्रत्येक व्यक्ति एक जिज्ञासु है। उसे अपने मार्ग और गुरु के चुनाव की पूरी स्वतंत्रता होनी चाहिए। मैं मानता हूँ कि जिस प्रकार अच्छे-बुरे पति अथवा पत्नियाँ नहीं होतीं, उसी प्रकार गुरु भी अच्छा-बुरा नहीं होता। जब दो व्यक्ति आपस में मिलकर एक-दूसरे के साथ नहीं चल पाते, तो आप किस प्रकार यह तय करेंगे कि उनमें अच्छा या बुरा कौन है?

आजकल ढोंगी गुरुओं की बहुत चर्चा होती है। लोग कहते हैं कि उन्होंने अपने शिष्यों का बड़ा अहित किया है। यदि गुरु के साथ आपकी नहीं बनती है तो यह आपकी समस्या है। गुरु अच्छा, बुरा, संत या धूर्त नहीं होता। ऐसे लोग जो अपने लाभ के उद्देश्य से गुरु बनने का स्वांग रचते हैं, वे भी यथासमय, अंततोगत्वा उत्तरदायी बन जाते हैं। मैंने ऐसी अनेक घटनाएँ देखी हैं।

आध्यात्मिक मानसिकता वाले लोगों को निश्चित रूप से लोगों के मन में भ्रांति फैलाने से बचना चाहिए कि 'ये गुरु महान् हैं या वे कुछ भी नहीं।' शिक्षा व्यवस्था में हमेशा विविधता और श्रेणियाँ रही हैं, यही बात गुरुओं के साथ भी लागू होती है। उनके व्यक्तिगत जीवन में त्रुटियाँ हो सकती हैं, इसका अर्थ यह नहीं कि मैं अपने गुरु की पूजा और दूसरों के गुरु की निन्दा करूँ। हमें केवल इस बात पर ध्यान देना है कि साधक के जीवन में गुरु का कितना सकारात्मक योगदान रहा है। यदि गुरु ने सौ-दो सौ लोगों का मार्गदर्शन भी किया है तो वह पर्याप्त है।

एक छोटी मोमबत्ती है और एक बड़ा प्रकाश पुंज है, आप दोनों की तुलना नहीं कर सकते। मोमबत्ती अनुपयोगी नहीं होती है, क्योंकि बड़ा प्रकाश हर स्थान को प्रकाशित नहीं कर सकता। ऐसे स्थानों पर, जहाँ प्रकाश न हो, मोमबत्ती बड़ी उपयोगी होती है। मनुष्य के अंधकारपूर्ण क्रमविकास के पथ पर हम जैसे गुरु मोमबत्तियों के समान हैं, जो अपने प्रकाश से शिष्य के लक्ष्य तक के मार्ग को प्रकाशित करते हैं। एक मोमबत्ती के बाद दूसरी मोमबत्ती और उसके बाद अन्य होती है। इसलिए अपने गुरु के नाम या स्वयं अपनी ख्याति के लिए दूसरे की निन्दा करके उसके नाम को कलंकित करना अच्छा नहीं है। हम सबको इस शताब्दी के इस विशेष मोड़ पर यह बात स्मरण रखनी चाहिए।

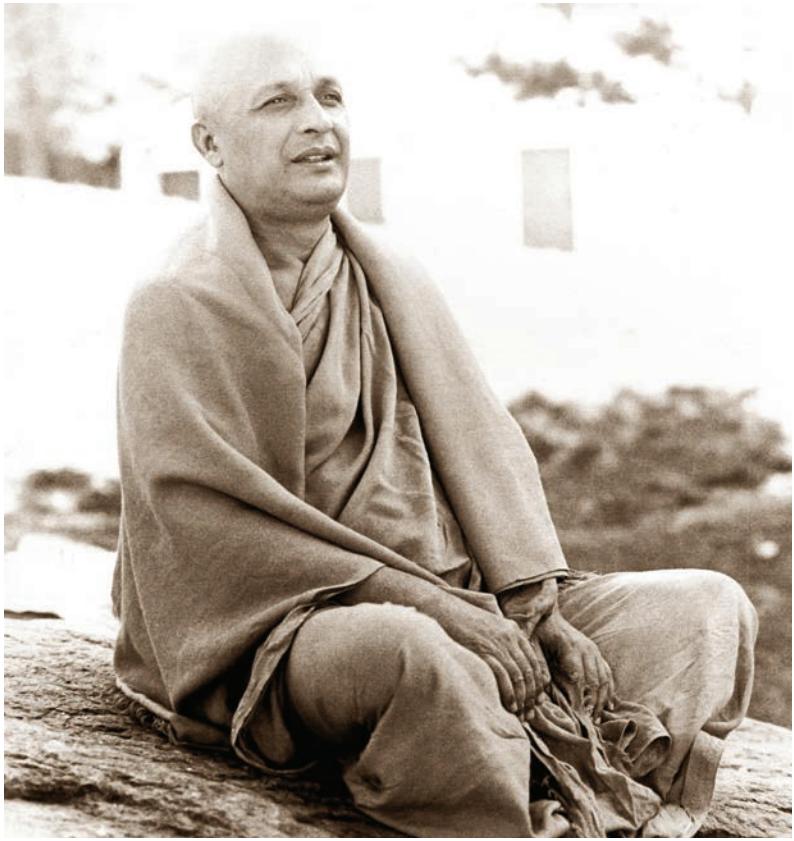

मैं अपने प्रत्येक संन्यासी तथा प्रत्येक शिष्य से यही कहता हूँ, 'किसी की भी बुराई न करें। यदि आप किसी के लिए अच्छे शब्द नहीं बोल सकते, तो चुप तो रह ही सकते हैं।' यह बात मैं मानवता के हित में कह रहा हूँ। यदि ऐसा नहीं हुआ तो मछलियों की तरह अनेक गुट, सम्प्रदाय बन जायेंगे, जिनकी तू-तू, मैं-मैं और खींचातानी हमारा जीना दूभर कर देगी। इसकी अपेक्षा हमें सम्पूर्ण मानवजाति के लिए अहिंसक तरीके से प्रत्येक व्यक्ति के सकारात्मक योगदान को एकत्र करना चाहिए। एक व्यक्ति मंत्र सिखाता है, दूसरा ध्यान, तीसरा प्राणायाम, चौथा क्रिया योग और पाँचवाँ तंत्र सिखाता है। एक दिन हम सब अपनी-अपनी विशेषताओं के साथ एक नयी व्यवस्था की छत्र-छाया में एकत्र होंगे।

– 27 जुलाई 1981, हेल्सिंकी, फिनलैंड

कुण्डलिनी तथा मादक द्रव्य

तंत्र में कुण्डलिनी जागरण की अनेक पद्धतियों की चर्चा है। उनमें से एक पद्धति जड़ी-बूटियों की भी है। जड़ी-बूटियों से तात्पर्य मादक द्रव्यों से नहीं है। तंत्र में जड़ी-बूटियों को औषधि कहा गया है। वेदों में तथा भारत में आर्य सभ्यता के अन्तर्गत आपने सोमरस का उल्लेख देखा होगा। लोग आध्यात्मिक अनुभवों के लिए 'सोम' नामक लता का रस पीते थे। इस लता को कृष्ण पक्ष में विशेष तिथियों को ही तोड़ा जाता था। फिर उसे हाण्डियों में रखकर जमीन के भीतर गाड़ देते थे। पूर्णिमा की रात्रि में उसे बाहर निकालकर लता के रस को पीते थे। इससे चेतना के जागरण के अनुभव होते तथा विचित्र दृश्य दिखते थे।

भारत में सोम लता से मिलती-जुलती कुछ अन्य वनस्पतियाँ भी होती थीं जिनका ऐसे लोग दुरुपयोग करते थे जो उच्च आध्यात्मिक अनुभवों के पात्र नहीं होते थे। इस बढ़ते हुए दुरुपयोग के कारण औषधियों का ज्ञान धीरे-धीरे लुप्त हो गया। यद्यपि हमें आज भी चेतना विस्तारक कुछ द्रव्यों की जानकारी है, तथापि हम लोगों को उनके उपयोग की सलाह नहीं देते, क्योंकि ऐसा करना निषिद्ध है।

यद्यपि अनेक लोग कुण्डलिनी जागरण के लिये लालायित हैं, परन्तु शारीरिक, स्नायविक, मानसिक तथा भावनात्मक तैयारी पर्याप्त न होने के कारण वे जागरण के अनुभवों को सम्हाल नहीं सकते। अब यदि कोई व्यक्ति इन द्रव्यों का सेवन करे तो हो सकता है उसकी कुण्डलिनी का झटके के साथ जागकर आरोहण हो जाए, परन्तु यदि उसका शरीर, मन तथा भावनाएँ वांछित सहयोग न करें, तो उसे बड़े हानिकारक अनुभव हो सकते हैं।

परम्परानुसार औषधियों का ज्ञान गुरु से शिष्य को प्रदान किया जाता है। परन्तु आजकल के गुरु अपने निकटतम संन्यासी शिष्य को भी यह ज्ञान नहीं देते। यदि भविष्य में मनुष्य की प्रकृति बदले, उसकी भावनात्मक, बौद्धिक, शारीरिक और मानसिक प्रतिक्रियाएँ बेहतर हों, तभी औषधियों के प्रयोग की परिपाटी पुनर्जीवित हो सकती है।

जहाँ तक औषधियों तथा मादक द्रव्यों का सम्बन्ध है, मैंने उनके विषय में गहन अध्ययन किया। मैंने स्वयं केवल गांजे का प्रयोग किया है। मैं कुण्डलिनी जागरण के उद्देश्य से उसका सेवन नहीं करता था, क्योंकि मेरा यह

पक्का विश्वास था कि गांजा कुण्डलिनी के जागरण में कतई सहायक नहीं हो सकता। फिर भी मैं एक निश्चित उद्देश्य से उसका सेवन करता था। उस समय मैं ऋषिकेश में गुरु-आश्रम में नहीं रहता था। मैं सागर सतह से दस हजार फुट ऊपर गंगोत्री में रहता था। वहाँ वर्ष में नौ माह बर्फ पड़ती तथा पानी जमा रहता है। मैं वहाँ नौ माह रहा। मैं गांजा पीता तथा आठ-नौ घंटे प्राणायाम की साधना करता था, क्योंकि वहाँ भीषण सर्दी पड़ती थी। कुछ समय बाद ठण्ढ असहनीय हो गयी तो मैं नीचे उतर आया। मेरे पास न तो पैसा था और न ही पर्याप्त कपड़े। वहाँ जिस कमरे में मैं रहता था वह बड़ा ठण्ढा और सीलन भरा था। नीचे आने पर यह मालूम हुआ कि मुझे टी.बी. हो गई थी। प्राकृतिक चिकित्सा द्वारा मुझे इस बीमारी से मुक्ति तो मिल गई, परन्तु गांजे के अति प्रयोग के कारण मैं अपनी जन्मजात एक स्वाभाविक प्रतिभा से हाथ धो बैठा।

जन्म से ही मुझमें चित्रवत् स्मृति की विलक्षण प्रतिभा थी। मुझे उस पर गर्व था। मैं आँखें बन्द कर पुस्तकों के अनेक पृष्ठ वैसे ही पढ़ जाता था जैसे आप आँखें खोलकर पढ़ते हैं। यदि कोई पौन घण्टे तक हिन्दी अथवा अंग्रेजी में व्याख्यान देता तो मैं उसे विराम तथा अल्पविराम सहित याद कर लेता था। फिर मैं उसे टाइप भी कर लेता था। वह स्मृति बड़ी विलक्षण थी। किसी के वार्तालाप को हूबहू बोलना या लिखना सामान्य स्मृति वाले के लिए सम्भव नहीं है। अपनी इसी प्रतिभा के द्वारा मुझे प्राचीन ग्रन्थ याद हो गए थे, परन्तु गांजे के अन्धाधुन्ध प्रयोग से मेरी यह प्रतिभा नष्ट हो गई। आज भी मेरी स्मरण शक्ति अच्छी है, परन्तु उसे विलक्षण नहीं कहा जा सकता। इसलिए मादक द्रव्यों के प्रयोग के विषय में मेरी व्यक्तिगत धारणा बहुत अच्छी नहीं है।

भारत में साधु-सन्त और फकीर चिलम में गांजा भर यदाकदा पीते हैं। उनका अनुभव है कि गांजे के सेवन से यौन उत्तेजना या तो समाप्त हो जाती है अथवा बिखर जाती है या उसका ऊर्ध्वीकरण हो जाता है। अनेक गृहस्थ भी इस उद्देश्य से गांजा पीते हैं। मैं मानता हूँ कि गांजे में कुछ ऐसे तत्त्व होते हैं जिनका स्वास्थ्य पर अच्छा प्रभाव पड़ता है, परन्तु यह हमेशा याद रखिये कि गांजे के सेवन द्वारा कुण्डलिनी जागरण की कोशिश करना अनुचित है।

कुण्डलिनी एक अचेतन शक्ति है। उसके जागरण के लिए उन्हीं युक्तियों का प्रयोग करना चाहिए जो अचेतन की गहराई पर अपना प्रभाव डाल सकती हैं। सोमरस अवचेतन मन को उत्तेजित कर उसमें संस्कारों का विस्फोट कर सकता है, परन्तु आज भी मैं मानता हूँ कि उससे कुण्डलिनी नहीं जाग सकती।

कल्पना कीजिये, आपके पास एक बम है। जब तक आप उसे पटकते नहीं, उसमें धमाका नहीं हो सकता। उसके विस्फोट की एक पद्धति होती है। यह एक विज्ञान है। यही बात कारतूस पर भी लागू होती है। यदि आप हवा में गोली फेंके तो कुछ नहीं होगा। उसे भी दागने की एक निश्चित प्रक्रिया होती है। ठीक इसी प्रकार मादक द्रव्यों से कुण्डलिनी कभी नहीं जाग सकती, क्योंकि ये द्रव्य उसे विस्फोटित नहीं कर सकते।

मन के अचेतन तलों पर कुण्डलिनी सोयी पड़ी है। मादक द्रव्यों की पहुँच और प्रभाव केवल अवचेतन मन तक होता है। उनके सेवन से अवचेतन मन में भरे संस्कार, दृश्य, ज्ञान, विचार सम्प्रेषण आदि ही अभिव्यक्त होते हैं। परन्तु कुण्डलिनी के जागरण के लिए आपको अचेतन की अकूत गहराई में उतरना होता है।

– मई 1980, स्टॉकहोम, स्वीडन

न्यू एज पत्रिका के साथ साक्षात्कार

आध्यात्मिक मार्ग पर चलने से पूर्व एक निष्ठावान् साधक को स्वयं से कौन-सा प्रश्न पूछना चाहिए?

उसे स्वयं से पूछना चाहिए कि वह क्या चाहता है? वह सिद्धि चाहता है या आनन्द, वह गहराइयों में जाना चाहता है या वह अपने विषय में पूर्ण रूप से जानना चाहता है? यही पहला प्रश्न है जो उसे स्वयं से पूछना चाहिए।

आपका उत्तर क्या होगा?

यह शिष्य पर निर्भर करता है। प्रत्येक व्यक्ति समाधि के विषय में प्रश्न नहीं कर सकता है। शिष्यों का स्तर और उनकी श्रेणी भिन्न होती है, उनके विकास के अनुसार उनके मन में प्रश्न उठते हैं। हम सबको उचित मानकर स्वीकार करते हैं।

योगाभ्यास तथा ध्यान के दौरान अनेक प्रकार के अनुभव होते हैं, जिनमें से कुछ को समझ पाना अत्यन्त कठिन भी होता है। उनके लिए क्या करना चाहिए?

कई लोगों को ध्यान के क्रम में अनुभव होते हैं। केवल आवश्यकता है उसकी व्याख्या करने वाले गुरु की। मान लो, आपके अन्दर अनुभवों के विस्फोट के साथ किसी प्रकार की जागृति होती है। अगली सुबह आप पूर्णतया खोये-खोये रहते हैं। आप न काम करना चाहते हैं, न खाना चाहते हैं, न बातें करना चाहते हैं। क्या किया जाये? अब, अनेक लोग आपको कहेंगे कि आप उस अवस्था से बाहर आने का प्रयास करें, किन्तु वास्तव में आपको अपनी चेतना की उस अवस्था से, जो अनुभवों के विस्फोट का परिणाम है, बाहर आने का प्रयास नहीं करना चाहिए।

यदि आप अपने गुरु के पास जायेंगे तो वे कहेंगे, 'बैठो, कुछ मत खाओ। दस-पन्द्रह दिनों तक उपवास करो, क्योंकि अनुभवों के विस्फोट से तुम्हारे रक्त में विशेष रसायनों का प्रवाह हुआ है, जिसने अस्थायी रूप से तुम्हारे यकृत के कार्य को अवरुद्ध कर दिया है। कुछ दिनों के विश्राम के बाद तुम अपने आप बेहतर महसूस करोगे। इसलिए डरने की कोई बात नहीं, अपने कमरे में आराम करो। दस दिनों के बाद तुम पुनः काम पर जा सकोगे।'

लेकिन अगर सही आध्यात्मिक मार्गदर्शन नहीं मिलता है, तब परिस्थिति को ठीक से न समझने वाला व्यक्ति कह सकता है, 'अरे, अच्छा होगा किसी डॉक्टर को दिखाओ।' यही मेरे साथ हुआ था। जब मैं छः साल का था, मुझे भी ऐसा अनुभव हुआ था। मैं अपने शरीर को देख पाता था, लेकिन उसका अनुभव नहीं कर पाता था। सच में यह एक विलक्षण अनुभव था, इसलिए मैंने अपने पिताजी को बताया। उन्होंने समझ लिया कि क्या हुआ है, पर परिवार के अन्य लोग मुझे एक चिकित्सक के पास ले गये। सौभाग्यवश उस समय डॉक्टर उतने अनुभवी नहीं थे, इसलिए मैं बच गया। न मेरे मस्तिष्क या मेरुदण्ड का ऑपरेशन हुआ, न दवा लेनी पड़ी। यह दो-तीन बार और हुआ। बाद में मुझे आश्चर्य होने लगा कि यह क्या था। मैंने स्वयं से प्रश्न किया, फिर विद्वानों से पूछा, पर वे मेरे इस अनुभव की व्याख्या नहीं कर सके।

क्या आप अपनी आध्यात्मिक खोज के विषय में कुछ बतायेंगें? आप स्वामी शिवानन्द के पास कैसे पहुँचे?

मैं स्वामी शिवानन्द के पास इसलिए पहुँचा कि मैं एक ऐसे व्यक्ति की खोज में था जो न केवल इस विषय के सिद्धान्तों को जानता हो, बल्कि जिसे आध्यात्मिक जीवन का व्यावहारिक अनुभव भी हो। अपने आध्यात्मिक जीवन में मुझे अनेक गम्भीर कठिनाइयों का सामना करना पड़ा। एक अवस्था में तो मैं चेतना की ऐसी स्थिति में पहुँच गया, जहाँ से मैं आगे नहीं जा पा रहा था। मेरे सामने एक पर्दा था जिसके पार मैं नहीं जा पाता था। युवावस्था में अपनी अन्तःचेतना के क्षेत्र में जो समस्या मेरे समक्ष आई उसके कारण मैं अनेक लोगों से मिला, पर मुझे किसी से समाधान नहीं मिला। मैंने अनेक पुस्तकें पढ़ी थीं, और मैं पूर्वी एवं पाश्चात्य दर्शन शास्त्र का विद्यार्थी भी था। मैं अनेक अच्छे व्यक्तियों के सम्पर्क में भी आया जो बड़े सहृदय, करुणामय, उदार एवं दयालु थे। मैंने पाया कि उनमें नैतिक एवं सदाचारयुक्त गुण भी थे, पर मुझे उनमें आध्यात्मिक लक्षण नहीं दिखे। वे मेरी समस्याओं को न स्पष्ट कर सके, न उनका समाधान दे पाये।

जब मैं स्वामी शिवानन्द जी से ऋषिकेश में मिला तो उन्होंने मुझसे पूछा, 'यहाँ क्यों आये हो?' मैंने उनसे कहा, 'अपनी आध्यात्मिक साधना में मैं एक ऐसे बिन्दु पर आ गया हूँ, जहाँ से आगे नहीं जा पा रहा हूँ।' उन्होंने कहा, 'यहाँ आश्रम में रहो और कठिन श्रम करो।' इसलिए मैं वहाँ बारह वर्षों तक

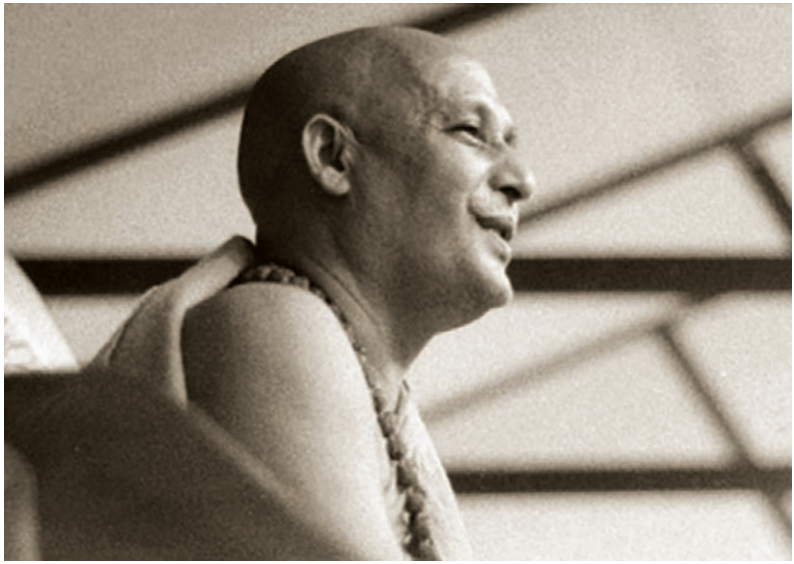

रहा। अन्ततोगत्वा जब मैं उस पर्दे को पार करने में सक्षम हो गया तब वहाँ मेरे रहने का प्रयोजन पूरा हुआ। तब मैंने परिव्राजक का जीवन व्यतीत करने के लिए आश्रम छोड़ दिया। इस प्रकार मेरे आध्यात्मिक जीवन का सहज विकास हुआ।

स्वामी शिवानन्द, जो इस युग के महान् योगियों में से एक थे, उनसे सम्बन्धित क्या आपकी कोई व्यक्तिगत स्मृति है?

हाँ, सैकड़ों स्मृतियाँ हैं। जब मैं मस्ती में होता हूँ तब मैं लोगों को बहुत-सी बातें बताता हूँ। उनके समस्त क्रिया-कलाप, उनकी जीवनशैली, वे सब अपने आप में योग, वेदान्त और तंत्र के भाष्य हैं। हाँ, वे मेरे गुरु थे इसलिए मैं अन्य संतों से उनकी तुलना नहीं कर सकता, पर मैं महसूस करता हूँ कि वे विलक्षण थे। यद्यपि वे चेतना के उच्चतर धरातल पर रहते थे, फिर भी वे योग्यतापूर्वक चेतना के सामान्य धरातल पर भी काम करते थे।

जब आपने 1964 में अपना आश्रम प्रारम्भ किया तब पूर्व और पश्चिम के बीच एक बड़े आध्यात्मिक आन्दोलन का आदान-प्रदान हुआ। अब सत्रह वर्षों बाद इस प्रक्रिया के विकास को आप किस प्रकार देख रहे हैं?

हाल के वर्षों में लोग ऐसे बिन्दु पर पहुँच गये हैं, जहाँ वे यह समझ गये हैं कि भौतिक जीवन ही जीवन का अन्तिम स्वरूप नहीं हो सकता है, कि मनुष्य को एक आन्तरिक राह पर भी चलना होगा, केवल समाधि और सिद्धि के लिए ही नहीं, बल्कि शारीरिक, मानसिक और भावनात्मक कल्याण के लिए भी। विगत बीस वर्षों में सभी जगह समाज के प्रत्येक स्तर पर मनुष्य के व्यक्तित्व पर आध्यात्मिक प्रभाव की चर्चा हो रही है।

अब इस दशक में मानव व्यवहार पर चेतना के रूपान्तरण के प्रभाव के प्रति लोग अत्यन्त सजग हो गये हैं। नशीली दवाओं से मुक्ति के केन्द्रों में लोग कहते हैं, 'जब तक आप मन का रूपान्तरण नहीं करते तब तक व्यसन-निरोध की दिशा में कुछ नहीं किया जा सकता।' जेल या सुधार गृहों में वे कहते हैं, 'इन अपराधियों का हम क्या करें? आप उन्हें बदल नहीं सकते। आपको उनके साथ कुछ और करना होगा।' जब पुलिस या सेना में भी भ्रष्टाचार हो तो आप उसे समाप्त नहीं कर सकते। भ्रष्टाचार का निवारण करने के लिए केवल एक ही रास्ता है, लोगों की अन्तश्चेतना में परिवर्तन के लिए कुछ करना होगा। जहाँ अन्य विधियाँ असफल हो जाती हैं वहाँ व्यक्ति के आन्तरिक व्यक्तित्व में परिवर्तन लाने में योग समर्थ है।

अब जो लोग आपके पास आते हैं, क्या वे पहले आने वाले लोगों से भिन्न हैं?

नहीं, वे भिन्न नहीं हैं। कठिनाइयाँ वही हैं – शारीरिक, भावनात्मक और आध्यात्मिक, पर संख्या बढ़ रही है तथा स्वीकृति सरल होती जा रही है। पहले, लोग मेरे पास आकर तर्क के द्वारा आश्वस्त होना चाहते थे, पर अब वे पहले से ही आश्वस्त होकर मेरे पास आते हैं, इसलिए अब हमें कम मेहनत करनी होती है।

आपके विचार से योगाभ्यास करने वाले व्यक्ति का उद्देश्य क्या होना चाहिए?

जब आप योगाभ्यास करते हैं तब आपका अन्तिम लक्ष्य अपने व्यक्तित्व के विभिन्न पक्षों को एकीकृत करना और अपनी चेतना को विकसित करना होना चाहिए ताकि स्वयं के विषय में अधिक जानकारी प्राप्त हो सके।

आजकल योग पश्चिम में चिकित्सा, स्वस्थ रहने के लिए व्यायाम आदि अनेक रूपों में आ रहा है, पर यह शायद ही अपने शुद्ध रूप में आ रहा है। इस विषय में आप कुछ कहना चाहेंगे?

बहुत कुछ योग के विद्यार्थियों पर निर्भर करता है। उदाहरण के लिए, प्रारम्भ में मैं दर्शन और वेदान्त की चर्चा करता था, पर बाद में चिकित्सा पर बोलने के लिए विवश हुआ, क्योंकि लोगों को इसकी आवश्यकता थी। हमारे समाज में बहुत लोग मानसिक रूप से बीमार हैं, इसलिए मुझे उस पक्ष की शिक्षा देनी पड़ती है, यद्यपि मेरा मन दर्शन से जुड़ा हुआ है। मैं योग या सांख्य सूत्रों को ही पढ़ाना पसन्द करता हूँ, पर लोग मेरे पास तात्कालिक समस्यायें लेकर आते हैं जिनका समाधान होना चाहिए। यदि कोई व्यक्ति पीठ दर्द, मिरगी या विषाद की समस्या के साथ आता है तो उसकी सहायता करने के अतिरिक्त दूसरा कोई विकल्प नहीं रहता है। इसलिए जब योग का प्रयोग तनावमुक्ति, उपचार या किसी अन्य उद्देश्य के लिए किया जाता है तब उसमें गुरु की गुणवत्ता निर्णायक नहीं होती है, बल्कि उसका निर्णय शिष्य की आवश्यकता के आधार पर किया जाता है। योग के उद्देश्यों में परिवर्तन का कारण यही है।

यदि आप दक्षिण अमेरिका जायेंगे तो वहाँ गठिया और कमरदर्द जैसे रोग देखेंगे। संयुक्त राज्य अमेरिका में ऐसे लोग मिलते हैं जो कहते हैं, 'मैं नहीं जानता मुझे क्या हो रहा है। आप कुछ कर सकते हैं क्या?' जब उनसे पूछा जाता है कि उन्हें क्या कष्ट है, तो वे कहते हैं कि उन्हें नहीं मालूम। अब ऐसे लोगों को गुरु योग सूत्र तो नहीं पढ़ा सकता है। उसके बदले उन्हें वह योग निद्रा या अन्तर्मौन के विषय में बतलाता है ताकि वे यह जान सकें कि उन्हें क्या हुआ है। इस प्रकार योग शिक्षक योग चिकित्सक बन जाता है।

एक बड़े विद्वान् ने पश्चिम में योग की संभावनाओं पर व्यंग्यात्मक टिप्पणी करते हुए कहा, 'योग की इतनी चर्चा क्यों, इसके स्थान पर थोड़ी जॉगिंग क्यों न कर ली जाये?' यह योग को दौड़ने, तैरने या फुटबॉल खेलने के समान एक स्वास्थ्य प्रणाली की तरह दिखाने का प्रयास था।

कभी-कभी ये बुद्धिजीवी बिना सोचे-समझे कुछ बोल जाते हैं जिसका न कोई वैज्ञानिक आधार होता है न सहज बुद्धि का। कोई भी कह सकता है, 'प्राणायाम का अभ्यास क्यों करते हो? जाओ थोड़ा जॉगिंग कर लो।' स्वामी

विवेकानन्द ने भी अपनी पुस्तकों में लिखा है, 'जाओ, थोड़ा फुटबॉल खेलो।' लेकिन जॉगिंग का प्रभाव केवल शरीर पर होता है, जबकि वैज्ञानिकों ने इस तथ्य को माना है कि योगासनों का निश्चित प्रभाव स्नायु-तंत्र, विद्युतीय आवेगों, ऑक्सीजन के अवशोषण की दर और हृदय की गति जैसी शारीरिक क्रियाओं पर पड़ता है। जब कोई व्यक्ति जॉगिंग करता है, तो उसके हृदय को अधिक परिश्रम करना पड़ता है। इसमें ऑक्सीजन का अधिकतम उपयोग होता है जबकि योगाभ्यास के क्रम में यह न्यूनतम होता है। जब इन सभी बातों पर विचार किया जाता है तब एक वैज्ञानिक दृष्टिकोण वाला बुद्धिजीवी यह समझ पायेगा कि योग की तुलना जॉगिंग जैसी कसरतों से नहीं की जा सकती है।

आप चूँकि स्कैन्डेनेवियन देशों में आते-जाते हैं और यहाँ के लोगों और उनकी मानसिकता को भी जान गये हैं, तो क्या आपके विचार से इस प्रकार का योग इनके लिए उपयोगी होगा?

मैं सोचता हूँ कि स्कैन्डेनेवियन लोग सदियों से जिस धर्म का अनुसरण कर रहे हैं उससे कभी भी गहराई से प्रभावित नहीं हुए हैं। सारे प्रभाव बिल्कुल बाह्य स्तरीय हैं। बहुत-से लोग किसी सम्प्रदाय विशेष के हैं, पर उसके बारे में प्रायः कुछ नहीं जानते हैं और जानना भी नहीं चाहते।

यूरोप के अन्य देशों की अपेक्षा स्कैन्डेनेवियन देशों में अधिक उन्मुक्त समाज है। उन्मुक्त समाज में आप तब तक सब कुछ करते जाते हैं जब तक कुछ और करने को शेष नहीं रह जाता है। वहाँ तीव्रता के साथ वासनाओं का उत्सर्जन होता है। जब वासनाओं का क्षय हो जाता है, तब उनका कोई उत्तेजक या उत्प्रेरक मूल्य नहीं रह जाता। तब लोग स्वतः ही जीवन के आध्यात्मिक पक्ष के प्रति सजग हो जाते हैं।

यह बड़ा स्वाभाविक मोड़ है। यह सब में होता है। जब कामनायें पूर्णतया संतुष्ट हो जाती हैं और वासनायें समाप्त हो जाती हैं, और आप भोग-विलास के लिए कुछ भी नहीं चाहते, तब आगे क्या? अगर आप जीवन के इस मोड़ पर पहुँच जाते हैं तब अगली अवस्था आध्यात्मिक जीवन की होती है। यही कारण है कि स्कैन्डेनेवियन लोग अध्यात्म और योग की ओर अत्यधिक आकर्षित हुए हैं।

स्कैन्डेनेविया में जो आध्यात्मिक प्रगति हुई है, क्या उस पर आप अपनी टिप्पणी देना चाहेंगे?

स्कैन्डेनेवियन देशों, विशेष कर डेनमार्क के प्रायः सभी नागरिक योग के विषय में कुछ-न-कुछ जानते हैं, भले ही वे उसका अभ्यास न करते हों। यदि आप किसी से योग के विषय में उसके विचार जानना चाहेंगे, तो वह संभवतः कहेगा कि 'भई, मैं अभ्यास तो नहीं करता, पर मैं समझता हूँ कि यह अच्छी चीज है।' मुझे यह भी सूचना मिली है कि कुछ राजकीय विभागों ने वयस्क नागरिकों के लिए प्रतिवर्ष योग पर पुस्तिकायें प्रकाशित की हैं। किसी भी राष्ट्र के लिए योग की यह स्वीकृति उल्लेखनीय है।

स्वीडन और नॉर्वे में काफी संख्या में उत्साही योग शिक्षक हैं जो योग पर काम कर रहे हैं, न केवल शिक्षा की दृष्टि से, बल्कि शोध की दृष्टि से भी। वे स्कैन्डेनेविया से बाहर हुई खोजों को अपने शोध से सम्बन्धित करना चाहते हैं। मैं देख पा रहा हूँ कि कुछ ही वर्षों में शिक्षा व्यवस्था के किसी अन्य संकाय के समान योग को भी संकाय के रूप में स्थापित किया जायेगा।

संघर्षरत मानवों के रूप में 'मैं' और 'अहं' का भाव पश्चिम की अधिकतर धारणाओं, दर्शनों एवं धर्मों का आधार है। किन्तु पूर्व में निःस्वार्थता और अहंकारहीनता का भाव प्रबल रहता है। पश्चिम के लोगों को अहंकार से मुक्त होने के लिए क्या करना चाहिए?

मानव व्यक्तित्व का एक पक्ष अहंकार है और इस अहंकार के साथ पाश्चात्य मन बहुत-से काम करने में समर्थ हुआ है और समग्र मानवता के लिए उसने ठोस योगदान दिया है। हम इसे पूर्णतया दूर नहीं कर सकते और हमें ऐसा करने का प्रयास भी नहीं करना चाहिए, परन्तु एक काम है जो हम कर सकते हैं। व्यक्तिगत अहंकार को ठोस, मूर्त प्रतीकों द्वारा रूपान्तरित किया जा सकता है।

एक बार जब अहंकार प्रतीकात्मक बन जाता है, तब आध्यात्मिक रूपान्तरण स्वतः हो जाता है।

इस प्रकार के तनावपूर्ण प्रतिस्पर्धात्मक और आक्रामकतापूर्ण सभ्यता वाले अधिकतर लोगों में निःस्वार्थ भाव का विकास करना अत्यन्त कठिन है। व्यक्ति को यहाँ किस प्रकार दैनिक जीवन व्यतीत करना चाहिए? पूरब में यह आसान प्रतीत होता है, क्योंकि वहाँ साधुओं, संतों और तपोमय आश्रमों की दीर्घकालीन परम्परा रही है।

मेरा भी यही विचार था, परन्तु मैंने पाया कि यह सही नहीं था। जब मैंने पहली बार अमेरिका, यूरोप और ऑस्ट्रेलिया की यात्रा की तो मैंने पाया कि वहाँ के लोग अद्भुत हैं, वे बहुत अच्छे, विनम्र, सहृदय और समझदार थे। मुझे विरोध की आशंका हो रही थी, विशेषकर धार्मिक समूहों, वैज्ञानिकों और डॉक्टरों से, पर ऐसा नहीं हुआ। कुछ लोगों ने तो यहाँ तक सोच लिया कि मैं भगवान सदृश हूँ! मैंने उनसे कहा, 'नहीं, मैं ईश्वर के समान नहीं, आप ही के समान मनुष्य हूँ। मुझसे सामान्य व्यवहार करें।'

प्रत्येक वर्ष मैं इन देशों में और लैटिन अमेरिका के देशों में जाता हूँ। वहाँ के लोग भी बड़े धार्मिक हैं और वहाँ भी ऐसी ही स्थिति है। न केवल अपने

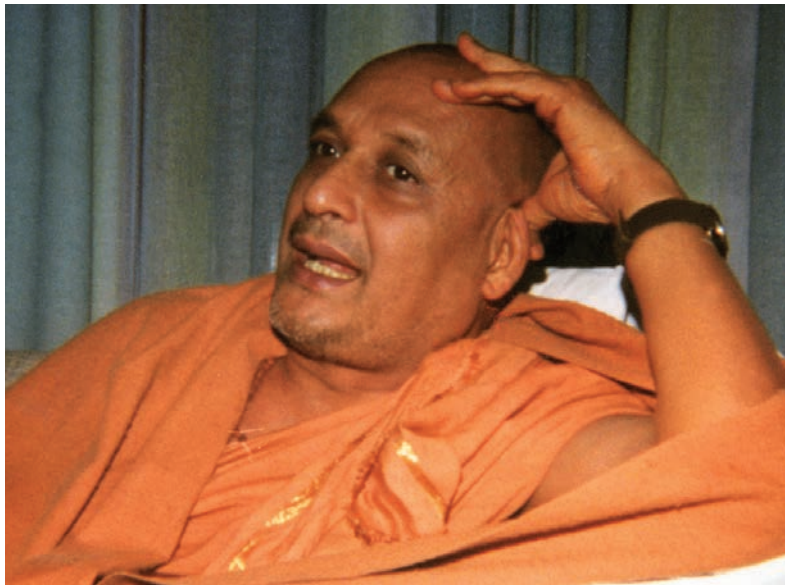

धार्मिक जीवन में, बल्कि अपने दैनिक जीवन में, हवाई जहाज में, रेलवे स्टेशन और होटलों में भी लोग सहयोग करने वाले हैं और विश्व के अन्य भागों की अपेक्षा अच्छा व्यवहार करते हैं। मैं इसलिए कह रहा हूँ कि मैं ऐसे देशों में भी गया हूँ जहाँ बहुत कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है, क्योंकि लोग अपने धर्म एवं सामाजिक विश्वासों के प्रति बड़े कट्टर हैं। एक हवाई अड्डे पर किसी व्यक्ति ने हम से पूछा, 'क्या आप ईश्वर में विश्वास करते हैं?' इस पर जब एक स्वामी ने उत्तर दिया 'नहीं' तो वह व्यक्ति क्रोधित हो गया और बोला, 'आपको कोई अधिकार नहीं अविश्वास करने का। मैं आपको मार दूँगा!' एक व्यक्ति जो ईश्वर में विश्वास करता है, सही हो सकता है, पर उस व्यक्ति को भी गलत नहीं कहा जा सकता है जो विश्वास नहीं करता, क्योंकि दोनों ईश्वर की ही सन्तान हैं।

क्या वर्तमान आध्यात्मिक आन्दोलनों की लोकप्रियता संकेत देती है कि मनुष्य अपने आध्यात्मिक अनुभवों का अधिकार मांग रहा है?

विगत डेढ़ सौ से दो सौ वर्षों की अवधि में पाश्चात्य भौतिकवादी समाज में सभी चीजें अर्थशास्त्र का विषय बन गयी हैं। व्यक्ति एक गतिशील औद्यौगिक समाज का अनिवार्य अंग बन गया है। अब समय आ गया है जब प्रत्येक व्यक्ति अपनी वैयक्तिकता का दावा करने का प्रयास कर रहा है। व्यक्ति समाज का अनिवार्य अंग है। चाहे वह औद्यौगिक समाज हो, सैन्य-समाज हो या अविकसित समाज हो, मनुष्य को उसी के साथ चलना भी है।

परन्तु साथ-ही-साथ उसके स्वभाव में कुछ ऐसे तत्त्व हैं जिन्हें पूर्णतया उसी पर छोड़ देना चाहिए। उदाहरण के लिए, आध्यात्मिक जीवन निश्चित रूप से व्यक्तिगत होना चाहिए, समाज इसके विषय में निर्णय नहीं कर सकता है, वह केवल सुविधायें उपलब्ध करा सकता है। सरकार को उस समय तक व्यक्ति की आध्यात्मिक अभिलाषाओं में दखल नहीं देनी चाहिए, जब तक वे शुद्ध हों, विकृत प्रयोजन से मुक्त हों। यदि आपकी आध्यात्मिकता में विकृत या राजनैतिक प्रयोजन छुपा है, तब समाज और सरकार को उसमें दखल देने का पूरा अधिकार है, लेकिन जब तक आप एक उत्साही साधक हो, तब तक किसी राजा, सम्राट्, सरकार या सामाजिक नियम को हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए।

आप शीर्षासन करने, माला जपने, विशेष वस्त्र पहनने, गिरजाघर जाने या ध्यान करने के लिए स्वतंत्र हैं। आप अपना नाम बदल कर संन्यासी बनने

के लिए स्वतंत्र हैं। आध्यात्मिक स्वतंत्रता का उद्देश्य ऐसा हो कि साधक को यह अनुभव न हो कि समाज या राष्ट्र द्वारा उसकी आध्यात्मिक नियति को बाधित कर दिया गया है।

आध्यात्मिक स्वतंत्रता ऐसी वस्तु है जिसकी देखभाल होनी चाहिए और आज ऐसा ही हो रहा है। अनेक लोगों ने गलत या सही ढंग से उस स्वतंत्रता की घोषणा भी की है, और मैं क्षितिज पर आशा की एक किरण देख रहा हूँ। भविष्य में प्रत्येक व्यक्ति द्वारा अपने आध्यात्मिक मार्ग को चुनने की सम्भावनाएँ छिपी हैं, उनका चयन किसी शक्तिशाली नेता, सरकार या समाज द्वारा नहीं किया जायेगा।

प्रायः ऐसा देखा गया है कि जब व्यक्ति को कुछ ऐसा चयन करने की स्वतंत्रता रहती है जो स्पष्टतः उसके लिए लाभकारी है और जो विकास की अगली अवस्था निरूपित करता है, तब जड़ता के कारण या निम्न प्रकृति के कारण वह उसे नहीं चुन पाता है।

मेरी समझ से यह सदैव अच्छा है कि व्यक्ति अपने लिए स्वयं चयन करे, न कि कोई दूसरा उसे कुछ दे। जब मनुष्य भोग-विलास से पूर्णतया तृप्त हो जाता है तब उसके जीवन में एक नया मोड़ आता है। इसी कारण हम देखते हैं कि एक अति सम्पन्न व्यक्ति संयम एवं गरीबी का अनुभव करना चाहता है। वह संतुष्टि की सीमा पर पहुँचकर समझ नहीं पाता है कि अपनी इस सम्पदा का क्या करे। अतः वह पलायन करने का प्रयास करता है और एक दूसरे प्रकार के जीवन में प्रवेश कर जाता है। मैं जहाँ भी गया हूँ, वहाँ मैंने पाया है कि

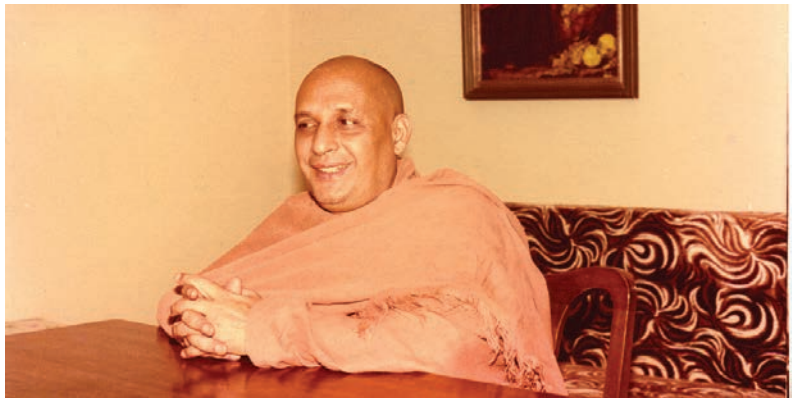

लोग उस मोड़ पर पहुँच गये हैं जहाँ वे जिज्ञासु बनने को तैयार हैं। विशेषकर भारत में हमें बहुत चिन्ता रहती है कि प्रत्येक व्यक्ति निश्चित रूप से साधक बन जाये और वह अपना रास्ता स्वयं खोजे। वह कुछ देर भटकेगा, पर बाद में अपने लक्ष्य को पा ही लेगा।

आज चारों ओर इतने प्रकार के आन्दोलन चल रहे हैं कि उनमें तुलना करने से बचना कठिन है। मैंने एक तिब्बती लामा के विषय में पढ़ा था कि वह हठयोग और तंत्र को अपूर्ण मानता था, क्योंकि कुछ योगी अयोग्य साधकों को जल्दी ही कठिन विधियों को बता देते हैं। क्या इस पर आप कुछ कहना चाहेंगे?

यह पूरा सच नहीं है, क्योंकि भारत में तांत्रिक विधियाँ बड़ी उचित रीति से, सुव्यवस्थित ढंग से सिखायी जाती हैं, विशेष रूप से गृहस्थों को, जो सालों-साल इसकी साधना करते हैं। भारत में तांत्रिक परम्परा का संचालन अधिकतर गृहस्थों द्वारा होता है, जो विवाहित होते हैं और स्वेच्छानुसार वे ब्रह्मचर्य या सम्भोग को अपनाते हैं। उनके समक्ष दोनों विकल्प खुले हैं और इनमें से किसी विकल्प का चयन करने में वे समाज की मर्यादाओं का उल्लंघन नहीं करते। तंत्र की जो साधना उन्हें दी जाती है वह उनके पारिवारिक गुण द्वारा क्रमबद्ध रहती है। प्रायः इस साधना को पूरा करने में चालीस-पचास वर्ष लग जाते हैं।

जब पश्चिम से एक साधक भारत या तिब्बत पहुँचता है तो उसे अनधिकारी तो नहीं कह सकते। वह निष्ठावान् साधक है। यह गुरु पर निर्भर करता है कि वह उसकी चेतना को रूपान्तरित करने के लिए कौन-सी विधि को अधिक उचित मानता है। गुरु उसे वे साधनायें नहीं देगा जो श्मशान में की जाती हैं, जिसमें नरमुण्ड, मदिरा या स्त्री का प्रयोग किया जाता है। तंत्र की ऐसी अनेक धारायें भी हैं जो आधुनिक मानव मन के अनुकूल हैं। मैं व्यक्तिगत रूप से मानता हूँ कि तंत्र एक विज्ञान है जिसे सबके लिए सुलभ बनाया जाना चाहिए।

तंत्र इतना व्यापक विज्ञान है कि आप यह नहीं कह सकते कि कोई व्यक्ति उसका अधिकारी नहीं है। उदाहरण के लिए, क्रियायोग तंत्र का ही एक अंग है, और तांत्रिक परम्परा के अनुसार क्रियायोग का अभ्यास किसी भी व्यक्ति द्वारा किया जा सकता है, जिसमें अधिकार का प्रश्न नहीं उठता है। ऐसा कहा जाता है कि भ्रष्ट और व्यभिचारी व्यक्ति भी, जो आध्यात्मिक जीवन की शायद सबसे बड़ी अयोग्यता है, तंत्र साधना का अधिकारी है।

यह उसे कहाँ ले जायेगा?

यह उसे आत्म-रूपान्तरण की सम्पूर्ण प्रक्रिया से ले जायेगा।

पर क्या यह आवश्यक नहीं कि तंत्र साधना के पहले साधक अपने मन को शुद्ध कर ले?

तंत्र में पहले हठयोग का अभ्यास करना होता है। साधक को सीधे राजयोग या लययोग में नहीं ले जाते हैं। पहले हठयोग का अभ्यास करना होता है, जिससे शारीरिक तत्त्व शुद्ध हो जाते हैं।

भारत में ऐसी पारिवारिक परम्परा रही है जिसमें लड़की को दस वर्ष की अवस्था में यंत्र और मंडल बनाना सिखाया जाता है। लगभग तेरह वर्ष की अवस्था में, जब वह रजस्वला होती है, उसकी साधना प्रारम्भ हो जाती है। पूरे एक माह तक उसे उषाकाल में जगना पड़ता है, नदी में स्नान करने जाना होता है, वहाँ से लौटकर वह पूजा करने के लिए बैठ जाती है। यह पूजा अत्यन्त व्यवस्थित ढंग से होती है। यह केवल मंत्र जप नहीं है, इसमें फल, फूल, रंग, गीत, घंटी की ध्वनियों का उपयोग किया जाता है। ये सभी तत्त्व मन को प्रभावित करते हैं। अतः यह कहना पूरी तरह सही नहीं है कि तांत्रिक दीक्षा अनधिकारी को दी जा सकती है।

ऐसा प्रतीत होता है कि अधिकांश आध्यात्मिक आन्दोलनों में मनुष्य को व्यक्तिगत स्तर पर अनेक बाधाओं का सामना करना पड़ता है। उत्साह के प्रारम्भिक क्षणों के बाद मन में नकारात्मक स्थिति उत्पन्न होती है जिसके कारण शंका, सन्देह, अरुचि और अन्य भावनाएँ उठने लगती हैं। ऐसा क्यों होता है?

ऐसा तभी होता है जब आन्दोलन का नेतृत्व करने वाला व्यक्ति महामानव होने का दिखावा करता है और अपने शिष्यों या अनुयायियों को अपनी बुद्धि या सामान्य ज्ञान का उपयोग नहीं करने देता। यदि नेता अपने व्यक्तिगत विचार, धर्म या दर्शन को अपने अनुयायियों पर आरोपित नहीं करता है तो ये समस्यायें नहीं आती हैं। उदाहरण के लिए, मैं शराब नहीं पीता, पर तुम चाहो तो पी सकते हो। मैं मांस नहीं खाता, पर तुम चाहो तो खा सकते हो। मेरी बात समझ में आयी न? आप मेरा आदर करते हो, क्योंकि मुझसे प्यार करते हो। आपके आदर का आधार आपका प्रेम है, पर आप मुझे इसलिए सम्मान

नहीं देते कि मैं एक महामानव या ईश्वर हूँ या मुझमें कोई विशेष शक्ति है। ये दकियानूसी बातें अनुयायियों को हमेशा विपत्ति में डाल देती हैं।

साथ ही यह बात महत्त्वपूर्ण है कि आप किसी के भी शिष्य हों, लेकिन किसी अन्य व्यक्ति से भी सीख सकते हैं। जैसे हम अपने पति या पत्नी पर एकाधिकार रखने का प्रयास करते हैं, बहुत-से शिक्षक अपने शिष्यों पर भी एकाधिकार चाहते हैं। यह अच्छा होगा कि उन्हें मधुमक्खी की तरह सीखने दिया जाये, थोड़ा पराग यहाँ से, थोड़ा वहाँ से और अन्त में सबको मिलाकर मधु को तैयार किया जाये। ज्ञान अधिकाधिक स्रोतों से प्राप्त किया जा सकता है। शिष्यों और विद्यार्थियों को अपने ज्ञान को समृद्ध करने की पूर्ण स्वतंत्रता होनी चाहिए जिससे शिक्षक उनके ज्ञान पर गर्व कर सके, क्योंकि वह किसी एक व्यक्ति से प्राप्त नहीं किया गया है, बल्कि सभी संभव स्रोतों से अपनाया गया है। इस परम्परा को कायम रखना चाहिए ताकि विनाशकारी घटनायें न हों।

अनेक आध्यात्मिक संस्थाओं में शक्ति, सत्ता और अधिकार, विशेषकर आर्थिक अधिकार को लेकर बड़ी समस्यायें खड़ी हो जाती हैं। क्या आपको ऐसी समस्याओं का सामना करना पड़ा है और आपने कैसे उनका समाधान किया है?

इन कठिनाइयों के प्रति मैं अत्यन्त सतर्क रहा हूँ। मैंने आश्रम से बाहर के व्यक्तियों की समिति को संस्थागत अधिकार दे दिये हैं, संन्यासियों को नहीं। हाँ, वे लोग मेरे ही शिष्य हैं, पर वे आश्रम में नहीं रहते हैं। वे संस्था की नीति निर्धारित करते हैं, उनका संचालन करते हैं, बैंकिंग आदि अन्य कार्यों को भी सम्भालते हैं। मैं केवल अपने शिष्यों पर ध्यान देता हूँ, यात्राएँ आयोजित करता हूँ, योग पर बोलता हूँ, साक्षात्कार देता हूँ, जैसे अभी दे रहा हूँ। मैं इसकी चिन्ता नहीं करता कि कितना पैसा है, आगे क्या होगा, कौन सचिव होने जा रहा है, कौन अध्यक्ष बनने जा रहा है।

आध्यात्मिक संस्थाओं में दो परम्परायें होती हैं – आध्यात्मिक और लौकिक। संस्थागत पक्ष भी महत्त्वपूर्ण है, किन्तु मेरा सम्बन्ध केवल आध्यात्मिक परम्परा अर्थात् गुरु, शिष्य और योग से है। इन दोनों परम्पराओं में उलझन नहीं होनी चाहिए, अन्यथा समस्यायें उत्पन्न हो जायेंगी। मैं प्रायः मुंगेर से बाहर ही रहता हूँ। आश्रम में जो भी होता है, मैं उसके लिए उत्तरदायी

नहीं होता। यदि वहाँ पर लोग भूखे रहते हैं तो मैं उसकी चिन्ता नहीं करता, और वे लोग मुझसे पूछेंगे भी नहीं, क्योंकि उन्हें भोजन देना मेरा दायित्व नहीं है।

आपके विचार से क्या यह साधक के लिए लाभकारी होगा यदि वह अपने विवेक द्वारा यह समझने का प्रयास करे कि आध्यात्मिक-बाजार में क्या-क्या उपलब्ध है?

नहीं, इसका कोई लाभ नहीं। आध्यात्मिक उपदेश अत्यन्त सरल होते हैं। आपके गुरु ने क्या कहा है, उनमें कितनी महानता है, निम्नता या गहराई है, इससे कोई अन्तर नहीं पड़ता। यदि आप निष्ठावान् साधक हैं तो आपको इससे लाभ होगा। बात यह है कि लाभ आपके अन्दर से आता है, बाहर से नहीं। आपको अपने अन्दर ढूँढना है। गुरु केवल कहते हैं – 'ज्ञान का स्रोत तुम्हारे अपने अन्दर है।' उन्हें केवल यही कहना होता है। आपको अपने अन्दर गहराई में जाना होगा। बुद्धि कुछ दूर तक साहायक होती है, पर कुछ समय बाद वह अवरोधक बन जाती है। हमें उस अवरोध को पार करना है।

यह अवरोध क्या है?

महर्षि पतंजलि के अनुसार यह सवितर्क समाधि की अवस्था में आता है। मन में निरन्तर संवाद चलता रहता है। उसे दूर करना बड़ा कठिन है। विचारों, अवधारणओं, और आदर्शों के विभिन्न मूल्यांकनों के प्रति सजगता बनी रहती है। समाधि में एक बिन्दु पर उन्हें छोड़ देना होता है। यह स्वप्न की अवस्था को छोड़ कर गहरी निद्रा में प्रवेश करने के समान है।

सामान्य-सी बातें भी मन में अटक कर उसे संकुचित कर देती हैं और स्वयं को दोहराती जाती हैं।

ऐसा होता है। इसे उसी रूप में होने दें। मन स्थिर वस्तु नहीं है। मस्तिष्क भी स्थिर नहीं रहता। इसका विकास होते रहता है। विकास का अर्थ है परिवर्तन, प्रगति और गतिशीलता। जब मैं नौ साल का था तब मेरा मस्तिष्क आज के समान नहीं है, जब मैं अट्ठावन वर्ष का हूँ। सभी चीजें बदली हैं। इसलिए हमें व्यक्ति को प्रकृति के नियमों के अनुसार परिवर्तित होने देना चाहिए।

– जुलाई 1981, हेल्सिंकी, फिनलैंड

दान सम्बन्धी महत्त्वपूर्ण सूचना

आश्रम के लिए दान राशि केवल निम्नलिखित श्रेणियों के अन्तर्गत स्वीकार की जाएगी –

1. **सामान्य दान**
   जो बिहार स्कूल ऑफ योग, बिहार योग भारती, योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट अथवा योग रिसर्च फाउण्डेशन को दिया जा सकता है और जिसका उपयोग यौगिक गतिविधियों के विकास एवं संवर्द्धन के लिए किया जाएगा।

2. **मूलधन निधि के लिए दान**
   बिहार स्कूल ऑफ योग, बिहार योग भारती, योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट अथवा योग रिसर्च फाउण्डेशन की मूलधन निधि के लिए। **मूलधन निधि** से प्राप्त ब्याज राशि का उपयोग संस्था/न्यास की सभी गतिविधियों के लिए किया जाएगा।

3. **सी.एस.आर. दान**
   जिसका उपयोग सी.एस.आर. गतिविधियों के लिए किया जाएगा।

इसलिए भक्तों से निवेदन है कि वे केवल उपर्युक्त श्रेणियों के अन्तर्गत अपनी दान राशि भेजें।

बिहार स्कूल ऑफ योग को दान 'SB Collect Online Donation Facility' के माध्यम से निम्नलिखित वेबसाइट द्वारा सीधे दिया जा सकता है – **https://www.onlinesbi.sbi/sbicollect/icollecthome.htm?corpID=2277965**

आप चेक, डी.डी. अथवा ई.एम.ओ. द्वारा भी दान दे सकते हैं जो **बिहार स्कूल ऑफ योग**, **बिहार योग भारती**, **योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट** या **योग रिसर्च फाउण्डेशन** के नाम से हो और मुंगेर में देय हो।

दान राशि के साथ एक पत्र संलग्न रहे जिसमें आपके दान का प्रयोजन, डाक पता, फोन नम्बर, ई-मेल और PAN नम्बर स्पष्ट हों।

योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट

ज्योतिर्मय पथ पर चलो – भाग 1

सत्यम् पूर्णिमा 2020–2022

स्वामी निरंजनानन्द सरस्वती

पृष्ठ 78, ISBN: 978-93-94604-52-0

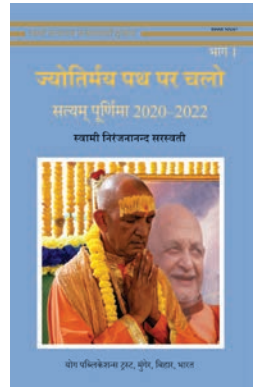

ज्योतिर्मय पथ पर चलो का प्रथम भाग स्वामी निरंजनानन्द जी द्वारा सन् 2020, 2021 एवं 2022 की सत्यम् पूर्णिमा में दिये सत्संगों का संकलन है। श्री स्वामीजी को समर्पित इस अनुष्ठान का विशिष्ट स्वरूप इन सत्संगों में स्पष्टत: परिलक्षित होता है, साथ ही दिव्यता के प्रत्यक्ष सान्निध्य में होने और दैवी अनुकम्पा प्राप्त करने का एक जीवन्त अनुभव अनायास ही साकार हो उठता है।

नया प्रकाशन

पुस्तकों की मूल्य सूची एवं क्रयादेश प्रपत्र प्राप्त करने के लिए सम्पर्क करें –

योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट, गरुड विष्णु, पी.ओ. गंगा दर्शन, फोर्ट, मुंगेर, बिहार 811201

दूरभाष : 91–6344–222430, 9162783904

जवाब के लिए अपना पता लिखा, डाकटिकट लगा लिफाफा भेजें, अन्यथा आपके आवेदन पर विचार नहीं किया जाएगा

वेबसाइट और एप्प

BIHAR YOGA

www.biharyoga.net

बिहार योग पद्धति की मुख्य वेबसाइट पर बिहार योग, बिहार योग विद्यालय, बिहार योग भारती, योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट तथा योग शोध संस्थान संबंधी जानकारियाँ उपलब्ध हैं।

सत्यम् योग प्रसाद

बिहार योग परम्परा के समस्त ऑडियो, वीडियो तथा पुस्तक प्रकाशन प्रसाद रूप में *satyamyogaprasad.net* वेबसाइट पर तथा *Android* एवं *iOS* उपकरणों पर एप्प के रूप में प्रस्तुत हैं।

योगा एवं योगविद्या ऑनलाइन

www.biharyoga.net/bihar-school-of-yoga/yoga-magazines/
www.biharyoga.net/bihar-school-of-yoga/yogavidya/

योगा एवं योगविद्या पत्रिकाएँ *Android* एवं *iOS* उपकरणों पर एप्प के रूप में भी उपलब्ध हैं।

अन्य एप्प (Android एवं iOS उपकरणों के लिए) एवं कार्यक्रम

- योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट की लोकप्रिय पुस्तक, ए.पी.एम.बी. अब सुविधाजनक एप्प के रूप में उपलब्ध है
- *Bihar Yoga* एप्प साधकों के लिए प्राचीन और नवीन यौगिक ज्ञान आधुनिक ढंग से पहुँचाता है
- *For Frontline Heroes* एप्प कोरोनावायरस के विरुद्ध अभियान में संघर्षरत कार्यकर्ताओं के लिए सरल योग अभ्यास प्रस्तुत करता है जो महामारी से उत्पन्न तनाव को सम्हालने में सहायक हैं
- स्वस्थ जीवन हेतु *biharyoga.net* तथा *satyamyogaprasad.net* पर *यौगिक जीवनशैली साधना* का कार्यक्रम उपलब्ध है

- Registered with the Department of Post, India
  Under No. MGR-01/2020-23
  Office of posting: Ganga Darshan TSO
  Date of posting: 1st-7th of every month
- Registered with the Registrar of Newspapers, India
  Under No. BIHHIN/2002/6306

issn 0972-5725

योगपीठ कार्यक्रम एवं योग विद्या प्रशिक्षण 2023

बिहार योग विद्यालय योगविद्या प्रशिक्षण

जुलाई 2022–जुलाई 2024	आश्रम जीवन प्रशिक्षण
जुलाई 1–दिसम्बर 31	योग चक्र अनुभव
नवम्बर 20–29	क्रिया योग एवं ज्ञान योग प्रशिक्षण

कार्यक्रम

नवम्बर 4-12	मुंगेर योग संगोष्ठी 2

मासिक कार्यक्रम

प्रत्येक शनिवार	महामृत्युंजय हवन
प्रत्येक एकादशी	भगवद् गीता पाठ
प्रत्येक पूर्णिमा	सुन्दरकाण्ड पाठ
प्रत्येक 4, 5 एवं 6 तारीख	गुरु भक्ति योग
प्रत्येक 12 तारीख	अखण्ड रामचरितमानस पाठ